महर्षि पतञ्जलि ने हिरण्यगर्भ के सूत्रों के आधार पर प्रस्तुत योगशास्त्र का निर्माण किया। इस का लक्ष्य मनुष्य को स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जाना अर्थात् चेतना को बाहर से अन्तर्मुख कर के परमात्मा में लय करना है।

योग के तीन अन्तर्विभाग हैं — उपासना-योग अर्थात् चित्त को एक लक्ष्य पर ठहराना, कर्मयोग अर्थात् निष्काम कर्म और ज्ञान-योग। यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह), नियम (शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान), आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्टाङ्गयोग की, क्रम अनुसार, आठ सीढ़ियाँ हैं।

इस संक्षिप्त संग्रह में योगशास्त्र के सूत्रों का निरूपण बहुत सरल और कम शब्दों में किया गया है। अतः यह ग्रन्थ उच्च श्रेणी के साधकों और जिज्ञासुओं के लिए अत्यधिक उपयोगी और आवश्यक है। योगशास्त्र में बताए हुए साधनों का पुनः पुनः श्रद्धापूर्वक सेवन अर्थात् श्रवण, मनन और निदिध्यासन करने से साधक को शीघ्र ही आध्यात्मिक लक्ष्य की उपलब्धि हो जाती है। योग पक्षपात और वाद-विवाद रहित कौशल है जो स्वयं को अनुभव द्वारा ही प्राप्त होता है।

–ॐ–

ISBN : 81-7525-724-5

पातञ्जल योग (अष्टाङ्गयोग)

ॐ

पातञ्जल योग

(अष्टाङ्गयोग)

पदच्छेद, अन्वय और भाषा-टीकासहित

ॐ

पातञ्जल योग

(अष्टाङ्गयोग)

पदच्छेद, अन्वय और भाषा-टीकासहित

सूचना — इस पुस्तक से उपार्जित धन का उपयोग
ज़रूरतमंद बच्चों की शिक्षा में किया जाएगा ।

© सर्वाधिकार सुरक्षित २००६ : इस पुस्तक अथवा इस पुस्तक के किसी अंश को व्यापारिक उद्देश्य से इलेक्ट्रॉनिक, मेकेनिकल, फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य सूचना संग्रह साधनों एवं माध्यमों द्वारा मुद्रित अथवा प्रकाशित करने से पूर्व संकलनकर्ता, प्रकाशक एवं वितरक से लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है ।

मूल्य	:	**२००/- (मात्र दो सौ) रुपए**
शीर्षक	:	पातञ्जल योग (अष्टाङ्गयोग) पदच्छेद, अन्वय और भाषा-टीकासहित
मुख्य विषय	:	ईश्वर, अध्यात्म, योग, पातञ्जल योग, अष्टाङ्गयोग, योगदर्शन, साधना, ध्यान, समाधि, संयम और कैवल्य
ISBN क्रम संख्या	:	८१-७५२५-७२४-५
प्रथम संस्करण	:	एकादशी, २४ फरवरी, सन् २००६
प्रतियाँ	:	९०० अजिल्द + १०० सजिल्द
संकलनकर्ता, प्रकाशक, एवं वितरक	:	सुरेन्द्र शंकर आनन्द ३५८०, ३७-डी चण्डीगढ़ — १६० ०३६, भारत
ई-मेल	:	shanky_andy@yahoo.com अथवा shanky_andy@adhyatam.com
वेब-साईट	:	www.adhyatam.com

विषय सूची

	पृष्ठ
सूत्रों का वर्गीकरण	४
पाठकों के लिए निर्देश	६
पृष्ठभूमि	७
महर्षि कपिल का तत्त्वसमास	११
समाधिपाद	२०
साधनपाद	४२
विभूतिपाद	६५
कैवल्यपाद	८९
परिशिष्ट	१०४
मूल सूत्र	१०४
ॐ तालिका (१)	१३१
ॐ तालिका (२)	१३२
समाधि तालिका	१३३
योग के छब्बीस तत्त्व	१३४

-ॐ-

सूत्रों का वर्गीकरण

समाधिपाद

सूत्र	विषय
१-४	योगशास्त्र का आरम्भ और योग की परिभाषा
५-११	चित्त की वृत्तियों का वर्णन
१२-१६	अभ्यास और वैराग्य
१७-२२	समाधि का विषय
२३-२९	ईश्वर-प्रणिधान और उसके फल
३०-४०	चित्त के विक्षेप और उन के उपाय
४१-५१	समाधि के भेद

साधनपाद

सूत्र	विषय
१-२	क्रियायोग का स्वरूप और फल
३-१६	क्लेश और उन के नाश के उपाय
१७-२७	दृश्य और द्रष्टा का स्वरूप
२८-५५	अष्टाङ्गयोग का वर्णन

विभूतिपाद

सूत्र	विषय
१-३	धारणा, ध्यान और समाधि
४-८	संयम की परिभाषा
९-१२	चित्त के परिणाम
१३-१५	प्रकृति के परिणाम
१६-४८	संयम का फल
४९-५५	विवेकज्ञान और कैवल्य

कैवल्यपाद

सूत्र	विषय
१-६	सिद्धियों की प्राप्ति और जात्यन्तर परिणाम
७-१२	वासनाएं और कर्मों के फल
१३-२४	दृश्य और द्रष्टा
२५-३४	विवेकज्ञान और कैवल्य

-ॐ-

पाठकों के लिए निर्देश

अब इस पुस्तक में सूत्रों को पढ़ने की विधि बतलाई जाती है ।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥२॥

यह सूत्र है ।

यह सूत्र का पदच्छेद और अन्वय है ।

योगः — योग
चित्त — चित्त अर्थात् अन्तःकरण (की)
वृत्ति — वृत्तियों (का)
निरोधः — रुकना अर्थात् वृत्तियों का अन्तर्मुख हो कर चित्त में लीन हो जाना (है) ।

इस सूत्र की भाषा-टीका को ऊपर से नीचे पढ़ने से वाक्य बनता है, जैसे, योग चित्त की वृत्तियों का रुकना अर्थात् वृत्तियों का अन्तर्मुख हो कर चित्त में लीन हो जाना है ।

संगति — *सब वृत्तियों के निरोध होने पर पुरुष की क्या अवस्था होती है ?*

इस सूत्र का अगले सूत्र से क्या सम्बन्ध है ?

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥३॥

यह अगला सूत्र है ।

-ॐ-

पृष्ठभूमि

महर्षि पतञ्जलि ने हिरण्यगर्भ के सूत्रों के आधार पर प्रस्तुत योगशास्त्र का निर्माण किया । इस का लक्ष्य मनुष्य को स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जाना अर्थात् चेतना को बाहर से अन्तर्मुख कर के परमात्मा में लय करना है ।

योगशास्त्र में कुल छब्बीस तत्त्व[१] माने गए हैं — ईश्वर (पुरुष-विशेष), पुरुष (जीव) और प्रकृति के चौबीस तत्त्व अर्थात् मूलप्रकृति, महत्तत्व, अहंकार, पाँच तन्मात्राएँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच स्थूल भूत और मन । ईश्वर सृष्टि का निमित्त-कारण अर्थात् वस्तु को बनाने वाला है और प्रकृति उपादान-कारण अर्थात् सामग्री जिससे वस्तु का निर्माण होता है । ईश्वर की सन्निधि मात्र से जड़ प्रकृति में निम्न परिणाम होते हैं —

१ मूलप्रकृति से महत्तत्व,
२ महत्तत्व से अहंकार,
३ अहंकार से पाँच तन्मात्राएँ,
४ पाँच तन्मात्राओं से पाँच स्थूल भूत,
५ अहंकार से पाँच कर्मेन्द्रियाँ,
६ अहंकार से पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और
७ अहंकार से मन ।

---

[१] **परिशिष्ट** — योग के छब्बीस तत्त्व ।

जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग से समस्त सृष्टि का निर्माण हुआ है । यद्यपि पुरुष प्रकृति का स्वामी है, परन्तु अविद्या के कारण पुरुष अपने निज स्वरूप को भूल कर प्रकृति की जड़ता और उस से उत्पन्न दुःख को अपना स्वरूप समझने लगता है । इस सम्बन्ध में भारतीय दर्शनशास्त्रों [२] में निम्न चार विषयों पर इस प्रकार गहन चिन्तन किया गया है —

प्रश्न — हेय क्या है ?
उत्तर — आने वाला दुःख हेय है ।

प्रश्न — हेयहेतु अर्थात् हेय का कारण क्या है ?
उत्तर — द्रष्टा (पुरुष) और दृश्य (प्रकृति) का संयोग हेयहेतु है ।

प्रश्न — हान अर्थात् दुःख का नितान्त अभाव क्या है ?
उत्तर — अविद्या का अभाव हान है ।

प्रश्न — हानोपाय अर्थात् हान का उपाय क्या है ?
उत्तर — विवेकख्याति [३] हानोपाय है ।

---

[२] **छः मुख्य दर्शनशास्त्र अर्थात् षड्दर्शन** — मीमांसा, वेदान्त, न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग ।

[३] **साधनपाद** — सूत्र २६ ।

योग की सहायता से पुरुष विवेकख्याति से अविद्या का नाश कर अपने निज स्वरूप में स्थित हो जाता है, जिसे कैवल्य (मोक्ष) कहते हैं ।

योगशास्त्र के चार पादों में कुल १९५ सूत्र हैं । समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद और कैवल्यपाद में यथाक्रम से इक्यावन, पचपन, पचपन और चौंतीस सूत्र हैं । समाधिपाद और साधनपाद में, क्रम अनुसार, समाहित-चित्त और विक्षिप्त-चित्त वालों के लिए समाधि [४] के उपाय बतलाए गए हैं । विभूतिपाद में अश्रद्धालु को श्रद्धापूर्वक योग में प्रवृत्त करने के लिए योग की विभूतियाँ बतलाई गई हैं । कैवल्यपाद में उपयोगी-चित्त तथा चित्त के सम्बन्ध में शङ्काओं का निवारण किया गया है ।

योग के तीन अन्तर्विभाग हैं — उपासना-योग अर्थात् चित्त को एक लक्ष्य पर ठहराना, कर्मयोग अर्थात् निष्काम कर्म और ज्ञान-योग । यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह), नियम (शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान), आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्टाङ्गयोग की, क्रम अनुसार, आठ सीढ़ियाँ हैं ।

इस संक्षिप्त संग्रह में योगशास्त्र के सूत्रों का निरूपण बहुत सरल और कम शब्दों में किया गया है । अतः यह ग्रन्थ उच्च श्रेणी के साधकों और जिज्ञासुओं के लिए अत्यधिक उपयोगी और आवश्यक है ।

---

[४] **परिशिष्ट** — समाधि तालिका ।

योगशास्त्र में बताए हुए साधनों का पुनः पुनः श्रद्धापूर्वक सेवन अर्थात् श्रवण, मनन और निदिध्यासन करने से साधक को शीघ्र ही आध्यात्मिक लक्ष्य की उपलब्धि हो जाती है । योग पक्षपात और वाद-विवाद रहित कौशल है जो स्वयं को अनुभव द्वारा ही प्राप्त होता है ।

इस ग्रन्थ के अन्त में साधकों के लिए कुछ आवश्यक विषय परिशिष्ट भाग में दे दिए गए हैं । योगशास्त्र पर विस्तृत जानकारी ब्र० स्वामी श्री ओमानन्दतीर्थ जी कृत, गीताप्रेस द्वारा प्रकाशित पुस्तक, "पातञ्जलयोगप्रदीप" में उपलब्ध है ।

अनुभवी साधकों से नम्र निवेदन है कि त्रुटियों की सूचना और सुझाव ई-मेल पर देने की कृपा करें, ताकि अगले संस्करण में इस ग्रन्थ का सुधार किया जा सके ।

जिन महानुभाव के आशीर्वाद और प्रेरणा से हम इस ग्रन्थ को पूर्ण करने में सफल हुए हैं, हम उन के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं । अन्त में हम भारतीय ऋषि परम्परा को प्रणाम करते हुए इस ग्रन्थ को, सश्रद्धा, परमात्मा को समर्पित करते हैं ।

-ॐ-

महर्षि कपिल का तत्त्वसमास

महर्षि कपिल का सांख्य दर्शन और महर्षि पतञ्जलि का योगशास्त्र एक दूसरे के पूरक हैं । यदि सांख्य दर्शन बाहरी जगत् अर्थात् प्रकृति और पुरुष के तात्त्विक स्वरूप का विवेचन करता है, तो योगशास्त्र भीतरी जगत् अर्थात् चित्त और उसकी वृत्तियों की व्याख्या करता है । वास्तव में योग सांख्य का क्रियात्मक रूप है । योग सूत्रों की व्याख्या करने से पहले सांख्य दर्शन के सूत्रों का संक्षेप में वर्णन करते हैं ।

***संगति** — अब तत्त्वसमास आरम्भ करते हैं ।*

अथातस्तत्त्वसमासः ॥१॥

अथ-अतः — अब (आरम्भ करते हैं) उस
तत्त्व — तत्त्व (ज्ञान के)
समासः — संक्षिप्त संग्रह (को) ।

***संगति** — जड़ अर्थात् अचेतन तत्त्व के दो भेद हैं - प्रकृति और विकृति[५] । प्रथम प्रकृति की व्याख्या की जाती है ।*

अष्टौ प्रकृतयः ॥२॥

अष्टौ — (मूलप्रकृति, महत्तत्व, अहंकार और पाँच तन्मात्राएँ, ये) आठ (जड़ तत्त्व)

---

[५] **प्रकृति और विकृति** — प्रकृति वह तत्त्व है जो किसी नये तत्त्व का उपादान कारण है, विकृति वह तत्त्व है जो किसी नये तत्त्व का उपादान कारण नहीं है ।

प्रकृतयः — प्रकृतियाँ (हैं) ।

***संगति** — अब विकृति की व्याख्या करते हैं ।*

षोडश विकाराः ॥३॥

षोडश — (पाँच स्थूल भूत, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और मन, ये) सोलह (जड़ तत्त्व)

विकाराः — विकृतियाँ (हैं) ।

***संगति** — चेतनतत्त्व पुरुष का वर्णन अगले सूत्र में किया जाता है ।*

पुरुषः ॥४॥

पुरुषः — (पच्चीसवाँ तत्त्व चेतन) पुरुष (है) ।

***संगति** — जिन तीन गुणों की विषमता के कारण मूल प्रकृति चौबीस तत्त्वों में परिणत हो रही है, अब उन गुणों का वर्णन करते हैं ।*

त्रैगुण्यम् ॥५॥

त्रै — (सत्त्व, रजस् और तमस्, ये) तीन

गुण्यम् — गुण[६] (हैं) ।

***संगति** — उक्त तीनों गुणों का कार्य अगले सूत्र में बतलाते हैं ।*

---

[६] **तीन गुण** — सत्त्व अर्थात् प्रकाश, रजस् अर्थात् क्रिया और तमस् अर्थात् स्थिति जो, क्रम अनुसार, सुख, दुःख और मोह रूपी हैं । प्रकृति की समस्त वस्तुओं में तीनों गुणों में से कोई एक गुण प्रधान और बाकी दो गुण गौण रूप में विद्यमान रहते हैं ।

संचरः प्रतिसंचरः ॥६॥

संचरः — सृष्टि (और)

प्रतिसंचरः — प्रलय (इन तीन गुणों की अवस्था-विशेष[७] है) ।

***संगति** — अब सृष्टि के तीन अवान्तर भेद बतलाए जाते हैं ।*

अध्यात्ममधिभूतमधिदैवं च ॥७॥

अध्यात्मम् — आध्यात्मिक अर्थात् अपने से सीधा सम्बन्ध रखने वाले, जैसे अहंकार, इन्द्रियाँ, मन और शरीर;

अधिभूतम् — आधिभौतिक अर्थात् अन्य प्राणियों से सम्बन्ध रखने वाले, जैसे पशु, पक्षी, सर्प आदि

च — और

अधिदैवम् — आधिदैविक अर्थात् दिव्य शक्तियों से सम्बन्ध रखने वाले, जैसे पृथ्वी, सूर्य आदि, (ये सृष्टि के तीन अवान्तर भेद हैं) ।

***संगति** — अब बुद्धि की वृत्तियों के भेद बतलाते हैं ।*

पञ्चाभिबुद्धयः ॥८॥

पञ्च — (प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति[८], ये) पाँच

अभि — प्रकार की

बुद्धयः — बुद्धि (की वृत्तियाँ हैं) ।

***संगति** — अब ज्ञानेन्द्रियों का वर्णन करते हैं ।*

---

[७] **विशेष** — सामान्य वस्तुओं में विलक्षण प्रतीति का होना ।

[८] **समाधिपाद** — सूत्र ६ से ११ ।

पञ्च दृग्योनयः ॥९॥

पञ्च — (श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना और घ्राण, ये) पाँच
दृग्योनयः — ज्ञानेन्द्रियाँ (हैं) ।

***संगति** — अब प्राणों का वर्णन करते हैं ।*

पञ्च वायवः ॥१०॥

पञ्च — (प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान, ये) पाँच
वायवः — वायु अर्थात् मुख्य प्राण[९] (हैं) ।

***संगति** — अब कर्मेन्द्रियों का वर्णन करते हैं ।*

पञ्च कर्मात्मानः ॥११॥

पञ्च — (वाणी, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा, ये) पाँच
कर्मात्मानः — कर्मेन्द्रियाँ (हैं) ।

***संगति** — अब अविद्या के भेद बतलाते हैं ।*

पञ्चपर्वा अविद्या ॥१२॥

पञ्च — (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश[१०], ये) पाँच

---

[९] **पाँच मुख्य प्राण** — प्राण जो नासिका से हृदय तक व्यापक और इन्द्रियों का संचालक, अपान जो नाभि से पाद तक व्यापक और नीचे की ओर गति वाला, समान जो हृदय से नाभि तक व्यापक और रस को अङ्गों में बाँटने वाला, व्यान जो सारे शरीर में व्यापक, उदान जो कण्ठ से सिर तक व्यापक और ऊपर की ओर गति करने वाला है ।

पर्वा — गाँठें
अविद्या — अविद्या (कहलाती हैं) ।

***संगति** — अब अशक्तियों के भेद बतलाते हैं ।*

अष्टाविंशतिधाऽशक्तिः ॥१३॥

अष्टा-विंशति — (पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, नौ अतुष्टियाँ और आठ असिद्धियाँ, ये) अट्ठाईस
धा — प्रकार की
अशक्तिः — अशक्तियाँ अर्थात् बुद्धि का वध (हैं) ।

***संगति** — अब तुष्टियों के भेद बतलाते हैं ।*

नवधा तुष्टिः ॥१४॥

नव — (प्रकृति, उपादान, काल, भाग्य, शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध, ये) नौ
धा — प्रकार की
तुष्टिः — तुष्टियाँ[११] (हैं) ।

---

[१०] **साधनपाद** — सूत्र ३ से ९ ।

[११] **नौ तुष्टियाँ** — चार आध्यात्मिक तुष्टियाँ प्रकृति, उपादान, काल और भाग्य हैं, जिन के झूठे भरोसे पुरुष स्वरूपस्थिति का यत्न नहीं करता और पाँच बाह्य तुष्टियाँ शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध हैं, जिन से पुरुष स्वरूपस्थिति को समझे बिना संतुष्ट रहता है और जो वास्तव में दुःखों (अर्थात् विषय प्राप्ति, रक्षा, नाश, भोग और दूसरों की हिंसा) के कारण हैं ।

संगति — अब सिद्धियों के भेद बतलाते हैं ।

अष्टधा सिद्धिः ॥१५॥

अष्ट — (ऊह अर्थात् पूर्व जन्म के संस्कारों से ज्ञान होना, शब्द अर्थात् गुरु के उपदेश से ज्ञान होना, अध्ययन, सुहृत्प्राप्ति अर्थात् सिद्ध पुरुष से ज्ञान मिलना, दान, आध्यात्मिक दुःखहान, आधिभौतिक दुःखहान और आधिदैविक दुःखहान, ये) आठ
धा — प्रकार की
सिद्धिः — सिद्धियाँ (हैं) ।

संगति — अब अगले सूत्र में मूल धर्म बतलाते हैं ।

दश मौलिकार्थाः ॥१६॥

दश — (अस्तित्व, संयोग, वियोग, शेषवृत्तित्व, एकत्व, अर्थवत्त्व, पारार्थ्य, अन्यता, अकर्तृत्व और बहुत्व, ये) दस
मौलिक — मूल
अर्थाः — धर्म[१२] (हैं) ।

[१२] **दस मौलिक धर्म** — अस्तित्व अर्थात् पुरुष और अव्यक्त का अस्तित्व, संयोग अर्थात् पुरुष और अव्यक्त के संयोग से सृष्टि निर्माण, वियोग अर्थात् पुरुष और अव्यक्त के वियोग से मोक्ष, शेषवृत्तित्व अर्थात् जीवन-मुक्त की शेष-वृत्ति, एकत्व अर्थात् अव्यक्त का एकत्व होना, अर्थवत्त्व अर्थात् अव्यक्त का जीव के लिए भोग और अपवर्ग (स्वरूपस्थिति), पारार्थ्य अर्थात् अव्यक्त का जीव के लिए प्रयोजन, अन्यता अर्थात् अन्तःकरणों का भिन्न

संगति — अब अगले सूत्र में सृष्टि-रचना का प्रयोजन बताते हैं ।

अनुग्रहः सर्गः ॥१७॥

अनुग्रहः — अनुग्रह
सर्गः — सृष्टि (है) ।

संगति — अब प्राणियों की सृष्टि बतलाते हैं ।

चतुर्दशविधो भूतसर्गः ॥१८॥

चतुर्दशविधः — (ब्रह्मा, प्राजापत्य, ऐन्द्र, दैव, गान्धर्व, पित्र्य, विदेह, प्रकृतिलय, मानुष, पशु, पक्षी, रेंगनेवाले जन्तु, कीट और स्थावर, इन) चौदह प्रकार की
भूत — प्राणियों (की)
सर्गः — सृष्टि (है) ।

संगति — अब अगले सूत्र में बन्ध बतलाते हैं ।

त्रिविधो बन्धः ॥१९॥

त्रिविधः — (वैकृतिक, दाक्षिणिक और प्राकृतिक, ये) तीन प्रकार के
बन्धः — बन्ध[१३] अर्थात् पुरुष और प्रकृति का संयोग (हैं) ।

होना, अकर्तृत्व अर्थात् पुरुष चेतन-तत्त्व का अकर्ता और द्रष्टा मात्र होना, बहुत्व अर्थात् पुरुष का अनन्त होना ।

[१३] **तीन बन्ध और मोक्ष** — वैकृतिक अर्थात् आत्म-साक्षात्कार से शून्य रहकर वितर्कानुगत भूमि में आसक्त होना, दाक्षिणिक अर्थात् आत्म-साक्षात्कार से शून्य रहकर विचारानुगत भूमि में आसक्त

संगति — अब अगले सूत्र में मोक्ष बतलाते हैं ।

त्रिविधो मोक्षः ॥२०॥

त्रिविधः — (वैकृतिक, दाक्षिणिक और प्राकृतिक, ये) तीन प्रकार के
मोक्षः — मोक्ष[१३] अर्थात् पुरुष और प्रकृति का वियोग (हैं) ।

संगति — अब प्रमाण का स्वरूप बतलाया जाता है ।

त्रिविधं प्रमाणम् ॥२१॥

त्रिविधं — (प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम, ये) तीन प्रकार के
प्रमाणम् — प्रमाण[१४] (हैं) ।

संगति — अब दुःख का स्वरूप बतलाते हैं ।

त्रिविधं दुःखम् ॥२२॥

त्रिविधं — (आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक, ये) तीन प्रकार के
दुःखम् — दुःख (हैं) ।

संगति — अन्त में सांख्य-दर्शन का मुख्य ध्येय बतलाया जाता है ।

होना, प्राकृतिक अर्थात् आत्म-साक्षात्कार से शून्य रहकर आनन्दानुगत तथा अस्मितानुगत भूमियों में आसक्त होना ।

[१४] **साधनपाद** — सूत्र ७ ।

एतत् सम्यग् ज्ञात्वा कृतकृत्यः स्यात् । न पुनस्त्रिविधेन दुःखेनाभिभूयते ॥२३॥

एतत् — यह
सम्यग् — ठीक प्रकार (से)
ज्ञात्वा — जान कर (योगी)
कृतकृत्यः — कृतार्थ
स्यात् — हो जाता है (और)
पुनः — फिर
त्रिविधेन — तीन प्रकार (के)
दुःखेन — दुःखों से
न — नहीं
अभिभूयते — दबाया जाता ।

-ॐ-

समाधिपाद

संगति *— समाधिपाद में समाहित-चित्त वालों के लिए समाधि के उपाय बतलाते हैं ।*

अथ योगानुशासनम् ॥१॥

अथ — अब (आरम्भ करते हैं)
योग — योग (की)
अनु-शासनम् — पहले से विद्यमान (लक्षण, भेद, उपाय और फलों सहित) शिक्षा (देने वाले ग्रन्थ को) ।

संगति *— योग की क्या परिभाषा है ?*

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥२॥

योगः — योग
चित्त — चित्त अर्थात् अन्तःकरण[१५] (की)

---

[१५] **अन्तःकरण** — चित्त अर्थात् भूत और भविष्य स्मरण, अहंकार अर्थात् अहं और मम, बुद्धि अर्थात् निश्चय और अवधारण, मन अर्थात् सङ्कल्प और विकल्प ।

अन्तःकरण की पाँच अवस्थाएँ — मूढ़ अर्थात् तमस् प्रधान, क्षिप्त अर्थात् रजस् प्रधान, विक्षिप्त अर्थात् तमस् और रजस् प्रधान, एकाग्र अर्थात् सत्त्व प्रधान, निरुद्ध अर्थात् गुणातीत ।

मूढ़, क्षिप्त, विक्षिप्त अन्तःकरण का धर्म — काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और मात्सर्य ।

वृत्ति — वृत्तियों (का)
निरोधः — रुकना अर्थात् वृत्तियों का अन्तर्मुख हो कर चित्त में लीन हो जाना (है) ।

संगति *— वृत्तियों के निरोध होने पर पुरुष की क्या अवस्था होती है?*

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥३॥

तदा — तब (वृत्तियों के निरोध होने पर)
द्रष्टुः — द्रष्टा अर्थात् पुरुष की
स्वरूपे — अपने ही रूप अर्थात् चेतन-मात्र में
अवस्थानम् — स्थिति (होती है) ।

संगति *— वृत्तियों के निरोध से भिन्न व्युत्थान-अवस्था अर्थात् निरोध के विरोध में पुरुष का क्या स्वरूप होता है ?*

वृत्तिसारूप्यमितरत्र ॥४॥

इतरत्र — दूसरी अर्थात् वृत्तियों के निरोध से भिन्न अवस्था में (पुरुष)
वृत्ति — वृत्ति (के)
सारूप्यम् — समान रूप (होता है) ।

संगति *— वृत्तियाँ कितने प्रकार की होती हैं ?*

वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः ॥५॥

वृत्तयः — (उपर्युक्त) वृत्तियाँ
पञ्चतय्यः — पाँच प्रकार (की होती हैं, जो)
क्लिष्टाः — क्लिष्ट अर्थात् राग-द्वेष आदि क्लेशों की कारण (और)

अक्लिष्टाः — अक्लिष्ट अर्थात् राग-द्वेष आदि क्लेशों का नाश करने वाली (होती हैं) ।

संगति — उक्त पाँच वृत्तियों के क्या नाम हैं ?

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ॥६॥

प्रमाण — प्रमाण,
विपर्यय — विपर्यय,
विकल्प — विकल्प,
निद्रा — निद्रा (और)
स्मृतयः — स्मृति, (ये पाँच प्रकार की वृत्तियाँ हैं) ।

संगति — प्रमाण-वृत्ति के क्या भेद हैं ?

प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ॥७॥

प्रत्यक्ष — यथार्थ ज्ञान, (कार्य और कारण[१६] के सम्बन्ध से उत्पन्न)
अनुमान — अप्रत्यक्ष पदार्थ का ज्ञान (और)
आगमाः — वेद, शास्त्र तथा आप्त-पुरुष के वचन, (ये तीन प्रकार की इन्द्रियों और विषय के सम्बन्ध में)
प्रमाणानि — प्रमाण (वृत्तियाँ हैं) ।

---

[१६] **कार्य और कारण** — प्रत्येक कार्य (पदार्थ) अपने कारण में अव्यक्त और व्यक्त रूप से विद्यमान रहता है । वस्तुतः कोई भी पदार्थ पूर्ण रूप से नष्ट नहीं होता है । कारण से कार्य की अभिव्यक्ति कार्य का उत्पन्न होना है और कार्य का कारण में लय होना कार्य का अभाव है । सांख्य के इस सिद्धान्त को सत्यकार्यवाद कहते हैं ।

संगति — विपर्यय-वृत्ति क्या है ?

विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥८॥

विपर्ययः — विपर्यय (पदार्थ का)
मिथ्या — भ्रामक
ज्ञानम् — ज्ञान (है, जो)
अतद्रूप — उस (पदार्थ के वास्तविक) रूप में नहीं
प्रतिष्ठम् — प्रतिष्ठित (है) ।

संगति — विकल्प-वृत्ति के क्या लक्षण हैं ?

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः ॥९॥

शब्द — (जो ज्ञान) शब्द (से उत्पन्न)
ज्ञान — ज्ञान (के)
अनुपाती — पीछे चलने वाला (और)
वस्तु — वस्तु (की सत्ता से)
शून्यः — शून्य (हो, वह)
विकल्पः — विकल्प अर्थात् कल्पना (कहलाता है) ।

संगति — निद्रा-वृत्ति क्या है ?

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥१०॥

अभाव — (जाग्रत और स्वप्न अवस्था की) अनुपस्थिति (के ज्ञान की)
प्रत्यय — प्रतीति (को)
आलम्बना — आश्रय देने वाली

वृत्तिः — वृत्ति (को)
निद्रा — निद्रा अर्थात् सुषुप्ति (कहते हैं) ।

***संगति** — स्मृति-वृत्ति क्या है ?*

अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः ॥११॥
अनुभूत — (प्रमाण, विपर्यय, विकल्प और निद्रा के) अनुभव किए हुए
विषय — विषय (का)
असम्प्रमोषः — न खोया जाना अर्थात् किसी सहायक विषय को पा कर संस्कार का फिर से प्रकट हो जाना
स्मृतिः — स्मृति (कहलाता है) ।

***संगति** — उक्त पाँचों प्रकार की वृत्तियों के निरोध के क्या उपाय हैं ?*

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥१२॥
अभ्यास — अभ्यास (और)
वैराग्याभ्याम् — वैराग्य से
तत् — उन (पाँच प्रकार की वृत्तियों का)
निरोधः — निरोध (होता है) ।

***संगति** — अभ्यास क्या है ?*

तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः ॥१३॥
तत्र — उन (दोनों, अभ्यास और वैराग्य, में से चित्त की)
स्थितौ — स्थिरता के लिए (निरंतर)

यत्नः — प्रयत्न (करना)
अभ्यासः — अभ्यास (है) ।

***संगति** — अभ्यास दृढ़ कैसे होता है ?*

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढ़भूमिः ॥१४॥
तु — किन्तु
सः — वह (अभ्यास)
दीर्घ — बहुत
काल — समय (तक),
नैरन्तर्य — निरन्तर (और)
सत्कार — सत्कार से (ठीक ठीक)
आसेवितः — सेवन किया हुआ
दृढ़ — दृढ़
भूमिः —अवस्था (वाला हो जाता है) ।

***संगति** — दो प्रकार के वैराग्य, अपर और पर, में से सम्प्रज्ञात समाधि के साधन अपर-वैराग्य के क्या लक्षण हैं ?*

दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम् ॥१५॥
दृष्ट — देखे हुए अर्थात् लोक में दृष्टिगोचर होने वाले (और वेद शास्त्रों द्वारा)
आनुश्रविक — सुने हुए
विषय — विषयों (में, जो)
वितृष्णस्य — तृष्णा रहित (है), उसका
वैराग्यम् — वैराग्य

वशीकार — अपर-वैराग्य
संज्ञा — नाम वाला (है) ।

संगति *— असम्प्रज्ञात समाधि का साधन पर-वैराग्य क्या है ?*

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम् ॥१६॥

तत् — वह (वैराग्य)
परम् — पर अर्थात् सबसे श्रेष्ठ (है, जिसमें)
पुरुष-ख्यातेः — प्रकृति-पुरुष के विवेकज्ञान अर्थात् विवेकख्याति (के उदय होने से पुरुष)
गुण — गुणों (से)
वैतृष्ण्यम् — तृष्णा रहित (हो जाता है) ।

संगति *— अब अपर-वैराग्य वाली सम्प्रज्ञात अर्थात् सबीज समाधि के चार अवान्तर भेद अर्थात् वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता स्वरूप को बतलाते हैं ।*

वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् सम्प्रज्ञातः ॥१७॥

वितर्क — पाँच स्थूलभूत-विषयक तथा स्थूल इन्द्रिय-विषयक ग्राह्य भावना,
विचार — सूक्ष्मभूत-विषयक तथा सूक्ष्म इन्द्रिय-विषयक ग्राह्य भावना,
आनन्द — तन्मात्राओं तथा इन्द्रियों के कारण सत्त्व-प्रधान अहंकार-विषयक केवल ग्रहण भावना (और)
अस्मिता — चेतन से प्रतिबिम्बित चित्तसत्त्व बीज रूप अहंकार-विषयक ग्रहीतृ भावना, (इन से सम्बद्ध)

रूप — स्वरूपों (के)
अनुगमात् — सम्बन्ध से (जो चित्त की वृत्तियों का निरोध है, वह)
सम्प्रज्ञातः — सम्प्रज्ञात (समाधि है) ।

संगति *— अब पर-वैराग्य वाली असम्प्रज्ञात अर्थात् निर्बीज समाधि का लक्षण बतलाया जाता है ।*

विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः ॥१८॥

विराम — (सब वृत्तियों के) निरोध (के)
प्रत्यय — कारण अर्थात् पर-वैराग्य (के)
पूर्वः — पुनः पुनः
अभ्यास — अभ्यास (से जो)
संस्कार — संस्कार (मात्र)
शेषः — शेष (रह जाते हैं, वे)
अन्यः — दूसरी अर्थात् असम्प्रज्ञात (समाधि हैं) ।

संगति *— किस प्रकार के साधक का योग शीघ्र सिद्ध होता है ?*

भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम् ॥१९॥

विदेह — योगी जो पिछले जन्म में वितर्कानुगत और विचारानुगत समाधि सिद्ध कर चुके हैं और आनन्दानुगत समाधि का अभ्यास कर रहे हैं (और)
प्रकृतिलयानाम् — योगी जो पिछले जन्म में आनन्दानुगत समाधि सिद्ध कर चुके हैं और अस्मितानुगत समाधि का अभ्यास कर रहे हैं, (उन दोनों को अगले जन्म में)
भव — जन्म (से ही असम्प्रज्ञात समाधि की)
प्रत्ययः — प्रतीति (होती है) ।

संगति — भवप्रत्यय से भिन्न उपायप्रत्यय[१७] *वालों के लिए असम्प्रज्ञात समाधि के क्या उपाय हैं ?*

श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् ॥२०॥

इतरेषाम् — दूसरे (योगी जो विदेही और प्रकृतिलय नहीं हैं), उनको
श्रद्धा — श्रद्धा,
वीर्य — उत्साह,
स्मृति — ज्ञान के संस्कारों के जाग्रत होने,
समाधि — समाधि (और)
प्रज्ञा-पूर्वकः — प्रज्ञा अर्थात् विवेक, (इन पाँचों से असम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध होती है) ।

संगति — उपायप्रत्यय वालों की सबसे अन्तिम श्रेणी अर्थात् अधिमात्र उपाय और तीव्र संवेग वाले योगियों को शीघ्र समाधि लाभ होता है । उन्हीं का वर्णन अगले सूत्र में करते हैं ।

---

[१७] **उपायप्रत्यय** — श्रद्धा, वीर्य आदि उपाय तीन प्रकार के अर्थात् मृदु, मध्यम और अधिमात्र होते हैं । इन तीनों के भी तीन प्रकार के संवेग अर्थात् मृदु, मध्यम और अधिमात्र होते हैं । इस प्रकार उपायप्रत्यय वालों के नौ भेद अर्थात् मृदु उपाय और मृदु संवेग, मृदु उपाय और मध्यम संवेग, मृदु उपाय और तीव्र संवेग, मध्यम उपाय और मृदु संवेग, मध्यम उपाय और मध्यम संवेग, मध्यम उपाय और तीव्र संवेग, अधिमात्र उपाय और मृदु संवेग, अधिमात्र उपाय और मध्यम संवेग, अधिमात्र उपाय और तीव्र संवेग होते हैं।

तीव्रसंवेगानामासन्नः ॥२१॥

तीव्र — तीव्र
संवेगानाम् — गति अर्थात् वैराग्य (और श्रद्धा, वीर्य आदि उपायों की अधिमात्र) से (समाधि)
आसन्नः — निकटतम (होती है) ।

संगति — उक्त तीव्र संवेग के क्या भेद हैं ?

मृदुमध्याधिमात्रत्वात् ततोऽपि विशेषः ॥२२॥

ततः — उस
मृदु — हल्के (तीव्र संवेग) और
मध्य — मध्यम (तीव्र संवेग से)
अपि — भी
अधिमात्रत्वात् — अधिमात्र (तीव्र संवेग) में (समाधि लाभ में)
विशेषः — विशेषता (होती है) ।

संगति — क्या पूर्वोक्त अधिमात्र उपाय और अधिमात्र तीव्र संवेग से ही शीघ्रतम समाधि लाभ होता है अथवा कोई और भी सुगम उपाय है?

ईश्वरप्रणिधानाद्वा ॥२३॥

वा — अथवा
ईश्वर-प्रणिधानात् — ईश्वर के गुणों का पुनः पुनः चिन्तन करने और कर्म और कर्म-फल ईश्वर के प्रति समर्पण करने से (शीघ्रतम समाधि लाभ होता है) ।

संगति — ईश्वर के क्या लक्षण हैं ?

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ॥२४॥

क्लेश — क्लेश,
कर्म — कर्म, (कर्मों के)
विपाक — फल (और वासनाओं के)
आशयैः — आवास अर्थात् वासनाओं से
अपरामृष्टः — स्पर्श रहित
ईश्वरः — ईश्वर (अन्य)
पुरुष-विशेषः — पुरुषों (से) विशेष (चेतन है) ।

संगति — ईश्वर की क्या विशेषता है ?

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम् ॥२५॥

तत्र — उस (ईश्वर में)
सर्वज्ञ — सर्वज्ञता (का)
बीजम् — कारण अर्थात् स्रोत
निरतिशयम् — अतिशय रहित अर्थात् सीमा को प्राप्त (है) ।

संगति — ईश्वर की और क्या विशेषता है ?

पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥२६॥

पूर्वेषाम् — (वह ईश्वर) पूर्व उत्पन्न (गुरुओं) का
अपि — भी
गुरुः — गुरु (है, क्योंकि वह ईश्वर)
कालेन — समय से
अनवच्छेदात् — सीमित नहीं अर्थात् सर्वकाल में विद्यमान (है) ।

संगति — ईश्वर का वाचक नाम क्या है ?

तस्य वाचकः प्रणवः ॥२७॥

तस्य — उस (ईश्वर का)
वाचकः — बोधक शब्द अर्थात् नाम
प्रणवः — ओ३म्[१८] (है) ।

संगति — ईश्वर-प्रणिधान का क्या लक्षण है ?

तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥२८॥

तत् — उस (प्रणव का)
जपः — जप (और)
तत् — उस (ईश्वर के)
अर्थ — अर्थस्वरूप (का)
भावनम् — ध्यान करना अर्थात् पुनः पुनः चिन्तन करना (ईश्वर-प्रणिधान है) ।

संगति — असम्प्रज्ञात समाधि से पूर्व ईश्वर-प्रणिधान के क्या विशेष फल हैं ?

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ॥२९॥

ततः — उस (ईश्वर-प्रणिधान से पुरुष को)
प्रत्यक्-चेतना — जीवात्मा (की)
अधिगमः — प्राप्ति अर्थात् साक्षात्कार
अपि — भी (होता है)

---

[१८] **परिशिष्ट** — ॐ तालिका ।

च — और
अन्तराय — विघ्नों (का)
अभावः — अभाव (भी) ।

संगति — ईश्वर-प्रणिधान से जिन विघ्नों का अभाव बतलाया गया है, उन विघ्नों का क्या स्वरूप है ?

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥३०॥

व्याधि — रोग,
स्त्यान — चित्त की अकर्मण्यता अर्थात् इच्छा होने पर भी योग में सामर्थ्य न होना,
संशय — शंका,
प्रमाद — समाधि के साधनों का अनुष्ठान न करना,
आलस्य — आलस्य,
अविरति — विषयों में तृष्णा बनी रहना,
भ्रान्ति-दर्शन — मिथ्या ज्ञान,
अलब्ध-भूमिकत्व — रुकावट के कारण समाधि में न पहुँच पाना,
अनवस्थितत्वानि — समाधि में पहुँच कर उस में चित्त का न ठहरना,
ते — ये
चित्त — चित्त (के नौ)
विक्षेपाः — विक्षेप, (योग के मूल)
अन्तरायाः — विघ्न (हैं) ।

संगति — पूर्वोक्त नौ विक्षेप अगले पाँच उपविक्षेपों को उपस्थित करते हैं ।

दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः ॥३१॥

दुःख — दुःख,
दौर्मनस्य — इच्छा पूर्ति न होने पर मन में क्षोभ,
अङ्गमेजयत्व — शरीर के अङ्गों का काँपना, (बिना इच्छा के)
श्वास — साँस का अंदर आना (और बिना इच्छा के)
प्रश्वासाः — साँस का बाहर जाना, (ये पाँच उप)
विक्षेप — विक्षेप (पूर्वोक्त नौ अन्तरायों के)
सहभुवः — साथ होते हैं ।

संगति — विक्षिप्त चित्त वालों के लिए नौ विक्षेपों और पाँच उपविक्षेपों के निरोध के क्या उपाय हैं ?

तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः ॥३२॥

तत् — उन (विक्षेपों को)
प्रतिषेधार्थम् — दूर करने के लिए
एकतत्त्व — एक तत्त्व अर्थात् इष्ट (का)
अभ्यासः — अभ्यास (करना चाहिए) ।

संगति — चित्त के मल को दूर करने का क्या उपाय है ?

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥३३॥

सुख — सुखी,
दुःख — दुःखी,
पुण्य — पुण्यात्मा (और)
अपुण्य — पापात्मा (के)

विषयाणाम् — विषयों में (यथाक्रम से)
मैत्री — मित्रता,
करुणा — दया,
मुदिता — हर्ष (और)
उपेक्षाणाम् — उदासीनता (की)
भावनातः — भावना (के अनुष्ठान) से
चित्त-प्रसादनम् — चित्त निर्मल और प्रसन्न (होता है) ।

संगति — *निर्मल और प्रसन्न चित्त वाले उत्तम अधिकारियों के लिए चित्त-स्थिति का पहला उपाय क्या है ?*

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य ॥३४॥

वा — या तो
प्राणस्य — प्राण को (नासिका द्वारा प्रयत्न विशेष से)
प्रच्छर्दन — बाहर फेंकने (और)
विधारणाभ्याम् — रोकने से (मन की स्थिति को बाँधा जाता है) ।

संगति — *चित्त-स्थिति अथवा निरोध का दूसरा उपाय क्या है ?*

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धिनी ॥३५॥

वा — अथवा (दिव्य गन्ध, रस, रूप, स्पर्श अथवा शब्द)
विषयवती — विषयों वाली
प्रवृत्तिः — प्रवृत्ति
उत्पन्ना — उत्पन्न (हो कर)
मनसः — मन की
स्थिति — स्थिति (को)
निबन्धिनी — बाँधने वाली (होती है) ।

संगति — *चित्त-स्थिति का तीसरा उपाय क्या है ?*

विशोका वा ज्योतिष्मती ॥३६॥

वा — अथवा
विशोका — शोक रहित (सात्त्विक)
ज्योतिष्मती — प्रकाश वाली (प्रवृत्ति भी मन की स्थिति को बाँधने वाली होती है) ।

संगति — *चित्त-स्थिति का चौथा उपाय क्या है ?*

वीतरागविषयं वा चित्तम् ॥३७॥

वा — अथवा
राग — राग
वीत — रहित
विषयम् — विषय वाला (महान् योगियों का)
चित्तम् — चित्त (मन की स्थिति को बाँधने वाला होता) है ।

संगति — *चित्त-स्थिति का पाँचवाँ उपाय क्या है ?*

स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ॥३८॥

वा — अथवा
स्वप्न — स्वप्न (और)
निद्रा — निद्रा (के)
ज्ञान — ज्ञान (का)
आलम्बनम् — आश्रय (करने वाला चित्त मन की स्थिति को बाँधने वाला होता है) ।

संगति — चित्त-स्थिति का छठा उपाय क्या है ?

यथाभिमतध्यानाद्वा ॥३९॥

वा — अथवा (जिसको)
यथा — जो
अभिमत — इष्ट (हो, उस के)
ध्यानात् — ध्यान से (मन की स्थिति बँध जाती है) ।

संगति — चित्त-स्थिति का क्या फल है ?

परमाणुपरममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः ॥४०॥

अस्य — (पूर्वोक्त उपायों से स्थिर हुए चित्त) का (सूक्ष्म पदार्थ)
परमाणु — परमाणु (आदि से ले कर)
परम-महत्त्व-अन्तः — परम महान् (पदार्थों में)
वशीकारः — वशीकार (हो जाता है) ।

संगति — स्थिर चित्त की क्या स्थिति होती है ?

क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः ॥४१॥

क्षीण — क्षीण (रजस् और तमस् गुण)
वृत्तेः — वृत्ति (वाले चित्त का)
अभिजातस्य — उत्तम जाति की (स्फटिक)
मणेः — मणि (की)
इव — भाँति
ग्रहीतृ — ग्रहीता अर्थात् अस्मिता,
ग्रहण — ग्रहण अर्थात् इन्द्रिय (और)

ग्राह्येषु — ग्राह्य अर्थात् स्थूल भूत तथा सूक्ष्म तन्मात्रा (विषय) में
तत्स्थ — एकाग्र स्थित (हो कर)
तदञ्जनता — उसी (विषय के) स्वरूप को प्राप्त हो जाना (सम्प्रज्ञात)
समापत्तिः — समाधि अर्थात् चित्त का विषय के साथ तदाकार हो जाना (है) ।

संगति — अब इस समापत्ति अर्थात् सबीज-समाधि के चार भेदों में से पहले भेद का वर्णन करते हैं ।

तत्र शब्दार्थज्ञानविकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः ॥४२॥

तत्र — उन (समापत्तियों में से)
शब्द — शब्द,
अर्थ — अर्थ (और विषय)
ज्ञान — ज्ञान (के तीनों)
विकल्पैः — भेदों से
संकीर्णा — मिली हुई (समाधि)
सवितर्का — सवितर्क अर्थात् विशेष तर्क सहित (अथवा सविकल्प)
समापत्तिः — समापत्ति (कहलाती है) ।

संगति — समापत्ति का दूसरा भेद क्या है ?

स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा निर्वितर्का ॥४३॥

स्मृति — स्मृति (के)
परिशुद्धौ — शुद्ध अर्थात् आगम और अनुमान के शब्द और ज्ञान से रहित (हो जाने पर)
स्वरूप — अपने रूप (से)

शून्या — शून्य
इव — जैसी (केवल ध्येय)
अर्थ — अर्थ
मात्र — मात्र (सी)
निर्भासा — भासने वाली (चित्त वृत्ति)
निर्वितर्का — निर्वितर्क अथवा निर्विकल्प (समापत्ति कहलाती है) ।

संगति — समापत्ति का तीसरा और चौथा भेद क्या है ?

एतयैव सविचारा निर्विचारा च सूक्ष्मविषया व्याख्याता ॥४४॥

एतया — इन अर्थात् पूर्वोक्त सवितर्क और निर्वितर्क समापत्तियों (के निरूपण) से
एव — ही
सविचारा — सविचार (और)
निर्विचारा — निर्विचार (समापत्तियाँ)
च — भी
सूक्ष्म — सूक्ष्म
विषया — विषयों (में)
व्याख्याता — वर्णन (की हुईं समझनी चाहिएं) ।

संगति — सूक्ष्म विषय कहाँ तक हैं ?

सूक्ष्मविषयत्वं चालिङ्गपर्यवसानम् ॥४५॥

च — तथा
सूक्ष्म — सूक्ष्म
विषयत्वम् — विषयता
अलिङ्ग — लिङ्ग-रहित अर्थात् मूलप्रकृति (किसी में न लीन होने

वाली गुणों की साम्यावस्था)
पर्यवसानम् — पर्यन्त अर्थात् सीमा तक (फैली हुई है) ।

संगति — अतः सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार और निर्विचार, ये चारों समापत्तियाँ सबीज-समाधि हैं । निर्विचार की उच्चतर और उच्चतम अवस्थाएं, क्रमशः, आनन्दानुगत और अस्मितानुगत कहलाती हैं ।

ता एव सबीजः समाधिः ॥४६॥

ता — ये (पूर्वोक्त चारों समापत्तियाँ)
एव — ही
सबीजः — सबीज
समाधिः — समाधि (कहलाती हैं) ।

संगति — सबसे श्रेष्ठ निर्विचार-समाधि का क्या फल है ?

निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः ॥४७॥

निर्विचार — निर्विचार (की)
वैशारद्ये — प्रवीणता से
अध्यात्म — प्रज्ञा (की)
प्रसादः — निर्मलता (होती है) ।

संगति — इस प्रज्ञा का सार्थक नाम क्या है ?

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा ॥४८॥

तत्र — उस (अध्यात्म-प्रसाद से)
ऋतम्भरा — सत्य को धारण करने वाले (और अविद्या से रहित)
प्रज्ञा — ज्ञान (की उत्पत्ति होती है) ।

संगति — ऋतम्भरा प्रज्ञा की क्या श्रेष्ठता है ?

श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया विशेषार्थत्वात् ॥४९॥

श्रुत — आगम (और)
अनुमान — अनुमान (की)
प्रज्ञाभ्याम् — प्रज्ञा से (ऋतम्भरा प्रज्ञा का)
विषया — विषय
अन्य — भिन्न (है),
विशेष — विशेष (रूप से)
अर्थत्वात् — अर्थ को साक्षात्कार करने के सन्दर्भ में ।

संगति — ऋतम्भरा प्रज्ञा का क्या फल है ?

तज्जः संस्कारोऽन्यसंस्कारप्रतिबन्धी ॥५०॥

तत्-जः — उस (ऋतम्भरा-प्रज्ञा) से उत्पन्न होने वाला
संस्कारः — संस्कार
अन्य — दूसरे (सब व्युत्थान के)
संस्कार — संस्कारों (को)
प्रतिबन्धी — रोकने वाला (होता है) ।

संगति — अब निर्बीज-समाधि अर्थात् कैवल्य अवस्था क्या है ?

तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः ॥५१॥

तस्य — (पर-वैराग्य द्वारा) उस (ऋतम्भरा-प्रज्ञा-जन्य संस्कार) के
अपि — भी
निरोधे — निरोध (हो जाने पर)
सर्व — सब (पुरातन और नूतन संस्कारों के)

निरोधात् — निरोध से
निर्बीजः — निर्बीज
समाधिः — समाधि (की उपलब्धि होती है) ।

-ॐ-

साधनपाद

संगति — अब विक्षिप्त-चित्त अर्थात् जिन के लिए अभ्यास और वैराग्य कठिन हैं, उन के लिए समाधि के उपाय बतलाते हैं।

तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः ॥१॥

तपः — तप,
स्वाध्याय — स्वाध्याय (और)
ईश्वर-प्रणिधानानि — ईश्वर-प्रणिधान, (ये तीनों)
क्रिया-योगः — क्रियायोग (है)।

संगति — इस क्रियायोग का क्या प्रयोजन है ?

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च ॥२॥

समाधि — (यह क्रियायोग) समाधि (की)
भावना — भावना
अर्थः — के लिए
च — और
क्लेश — क्लेशों (को)
तनू — दुबले
करण — करने (के)
अर्थः — लिए (है)।

संगति — यह क्लेश कौन से हैं ?

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः ॥३॥

अविद्या — अविद्या,
अस्मिता — अस्मिता,
राग — राग,
द्वेष — द्वेष (और)
अभिनिवेशाः — अभिनिवेश, (ये पाँच)
क्लेशाः — क्लेश (हैं)।

संगति — अविद्या किन क्लेशों का उत्पत्ति-क्षेत्र है ?

अविद्याक्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम् ॥४॥

अविद्या — अविद्या
उत्तरेषाम् — अगले अर्थात् अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश क्लेशों का (उत्पत्ति)
क्षेत्रम् — क्षेत्र है, (जो)
प्रसुप्त — बीजरूप में दबे हुए,
तनु — शिथिल कर दिए गए,
विच्छिन्न — बलवान् क्लेशों से दबे हुए (और)
उदाराणाम् — सहायक विषयों को पाकर अपने कार्य में प्रवृत्त, (इन चार प्रकार की अवस्थाओं वाले होते हैं)।

संगति — अविद्या जो अन्य चारों क्लेशों का मूल कारण है, उस का क्या स्वरूप है ?

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या ॥५॥

अनित्य — अनित्य,
अशुचि — अपवित्र,

दुःख — दुःख (और)
अनात्मसु — अनात्मा में (यथाक्रम से)
नित्य — नित्य,
शुचि — पवित्र,
सुख — सुख (और)
आत्म-ख्यातिः — आत्म-भाव (की प्रतीति)
अविद्या — अविद्या (क्लेश है) ।

संगति — अब अस्मिता का क्या स्वरूप है ?

दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता ॥६॥
दृक् — (द्रष्टा पुरुष की) दृक् (और प्रकृति की)
दर्शन — दर्शन
शक्त्योः — शक्तियों का
एकात्मता — एक स्वरूप
इव — जैसा (भान होना)
अस्मिता — अस्मिता (क्लेश है) ।

संगति — राग क्या है ?

सुखानुशयी रागः ॥७॥
सुख — सुख (भोग के)
अनुशयी — पीछे (सुख को भोगने की इच्छा)
रागः — राग (क्लेश है) ।

संगति — द्वेष क्या है ?

दुःखानुशयी द्वेषः ॥८॥
दुःख — दुःख (भोग के)
अनुशयी — पीछे (दुःख को न भोगने की इच्छा)
द्वेषः — द्वेष (क्लेश है) ।

संगति — अभिनिवेश क्या है ?

स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः ॥९॥
स्वरसवाही — (मरने का भय,) जो स्वभाव से ही बह रहा है (और)
विदुषः — विद्वानों (के लिए)
अपि — भी
तथा — ऐसा (ही)
आरूढः — प्रसिद्ध है (जैसा मूर्खों के लिए, वह)
अभिनिवेशः — अभिनिवेश (क्लेश है) ।

संगति — पाँच क्लेशों की चार अवस्थाओं अर्थात् प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार के बाद अब पाँचवीं अवस्था दग्ध-बीज क्लेशों को त्यागने की क्या विधि है ?

ते प्रतिप्रसवहेयाः सूक्ष्माः ॥१०॥
ते — वे (पूर्वोक्त पाँच क्लेश, जो क्रियायोग से)
सूक्ष्माः — सूक्ष्म (और विवेकख्याति की अग्नि से दग्ध-बीज हो गए हैं, असम्प्रज्ञात समाधि द्वारा)
प्रतिप्रसव — चित्त की प्रलय अर्थात् अपने कारण में लीन होने से (अपने आप)
हेयाः — निवृत्त (हो जाते हैं) ।

संगति — तनु क्लेशों को त्यागने की और क्या विधि है ?

ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः ॥११॥

तत् — (क्लेशों की) वे (स्थूल)
वृत्तयः — वृत्तियाँ (जो क्रियायोग से तनु कर दी गई हैं, विवेकख्याति)
ध्यान — ध्यान (द्वारा)
हेयाः — त्यागने योग्य (हैं जब तक वे दग्ध-बीज सदृश न हो जाएँ)।

संगति — कर्माशय का क्या फल है ?

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः ॥१२॥

क्लेश — क्लेश (जिस की)
मूलः — जड़ (है, ऐसे)
कर्म — कर्मों (का)
आशयः — आवास अर्थात् वासनाओं का समुदाय
दृष्ट — वर्तमान (और)
अदृष्ट — आने वाले
जन्म — जन्मों[१९] (में)
वेदनीयः — भोगने योग्य (है) ।

[१९] **जन्म-मरण चक्र** — वासना, फल (जाति, आयु और भोग), विपाक (नियत और अनियत), सकाम कर्म (शुक्ल, कृष्ण, कृष्णशुक्ल), कर्माशय, वासना... ।

संगति — कर्माशय का फल किस किस रूप में प्राप्त होता है ?

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ॥१३॥

मूले — (क्लेशों की) जड़ (के)
सति — विद्यमान (रहने तक)
तत् — उस (कर्माशय का परिपक्व)
विपाकः — फल
जाति — जन्म,
आयुः — जीवन-सीमा (और)
भोगाः — भोग (के रूप में प्राप्त होता रहता है) ।

संगति — जाति, आयु और भोग के क्या फल हैं ?

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात् ॥१४॥

ते — वे अर्थात् जाति, आयु और भोग
ह्लाद — सुख (और)
परिताप — दुःख (रूपी)
फलाः — फल (देते हैं, क्योंकि)
पुण्य — पुण्य (और)
अपुण्य — पाप (उन के यथाक्रम से)
हेतुत्वात् — कारण (हैं) ।

संगति — योगी के लिए सुख और दुःख का क्या स्वरूप है ?

परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः ॥१५॥

परिणाम — परिणाम,

ताप — ताप (और)
संस्कार — संस्कार, (इन तीन प्रकार के)
दुःखैः — दुःखों[२०] के कारण
च — और (परिणामी)
गुण — गुणों (की)
वृत्ति — वृत्तियों (के परस्पर)
विरोधात् — विरोधी स्वभाव के कारण
विवेकिनः — विवेकी (पुरुष) के लिए
सर्वम् — सब कुछ अर्थात् सुख भी
दुःखम् — दुःख
एव — जैसा (ही है) ।

संगति — कौन सा दुःख त्यागने योग्य अर्थात् हेय है ?

हेयं दुःखमनागतम् ॥१६॥

दुःखम् — (वह) दुःख
हेयम् — त्यागने योग्य (है, जो भविष्य में)
अनागतम् — आने वाला है ।

संगति — दुःख का मूल कारण अर्थात् हेय-हेतु क्या है ?

[२०] **तीन प्रकार के दुःख** — परिणाम अर्थात् विषय सुख भोग के बाद सुख के वियोग की सम्भावना का दुःख, ताप अर्थात् सुख की अपूर्णता और सुख प्राप्ति में विघ्नों का दुःख, संस्कार अर्थात् सुख वियोग के बाद सुख भोग के संस्कारों का दुःख ।

द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः ॥१७॥

द्रष्टृ — द्रष्टा (और)
दृश्ययोः — दृश्य का
संयोगः — संयोग (उक्त त्याज्य)
हेयः — दुःख (का)
हेतुः — कारण (है) ।

संगति — अब दृश्य क्या है ?

प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम् ॥१८॥

प्रकाश — सत्त्व,
क्रिया — रजस् (और)
स्थिति — तमस् (जिसका प्रकट)
शीलम् — स्वभाव (है),
भूतेन्द्रिय — भूत और इन्द्रियाँ (जिसका)
आत्मकम् — स्वरूप (है, पुरुष के लिए)
भोग — भोग (और)
अपवर्ग — स्वरूपस्थिति अथवा कैवल्य (जिसका)
अर्थम् — प्रयोजन (है, वह)
दृश्यम् — दृश्य (है) ।

संगति — गुणों की क्या अवस्थाएँ हैं ?

विशेषाविशेषलिङ्गमात्रालिङ्गानि गुणपर्वाणि ॥१९॥

विशेष — विशेष,

अविशेष — अविशेष,
लिङ्गमात्र — लिङ्गमात्र (और)
अलिङ्गानि — अलिङ्ग, (ये चार)
गुण — गुणों (की)
पर्वाणि — अवस्थाएँ अर्थात् परिणाम (हैं) ।

संगति — अब द्रष्टा का क्या स्वरूप है ?

द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः ॥२०॥

द्रष्टा — (चेतन-मात्र) द्रष्टा, (जो)
दृशिमात्रः — देखने की शक्ति मात्र (है, वह)
शुद्धः — निर्मल अर्थात् निर्विकार (होता हुआ)
अपि — भी (चित्त की वृत्तियों के)
प्रत्ययः — अनुसार
अनुपश्यः — देखने वाला (है) ।

संगति — दृश्य का प्रयोजन किस के लिए है ?

तदर्थ एव दृश्यस्यात्मा ॥२१॥

तत् — उस (द्रष्टा पुरुष के)
अर्थ — लिए
एव — ही
दृश्यस्य — दृश्य का
आत्मा — स्वरूप (है) ।

संगति — क्या द्रष्टा का प्रयोजन सिद्ध होने पर दृश्य नष्ट हो जाता है?

कृतार्थं प्रति नष्टमप्यनष्टं तदन्यसाधारणत्वात् ॥२२॥

कृतार्थम् — (जिस पुरुष का) प्रयोजन अर्थात् भोग और अपवर्ग सिद्ध हो गया है, (उस के)
प्रति — लिए (उक्त दृश्य)
नष्टम् — नष्ट (हो कर)
अपि — भी
अनष्टम् — नष्ट नहीं होता, (क्योंकि)
तत् — वह (दृश्य)
अन्य — दूसरों अर्थात् जिन पुरुषों का प्रयोजन अभी सिद्ध नहीं हुआ, (उन की)
साधारणत्वात् — साझे की वस्तु (है) ।

संगति — द्रष्टा और दृश्य का क्या कारण है ?

स्वस्वामिशक्त्योः स्वरूपोपलब्धिहेतुः संयोगः ॥२३॥

स्व — (प्रकृति-रूप) स्व (और पुरुष-रूप)
स्वामि — स्वामी, (इन दोनों)
शक्त्योः — शक्तियों (के)
स्वरूप — स्वरूप (की)
उपलब्धि — प्राप्ति (का)
हेतुः — कारण
संयोगः — संयोग (है) ।

संगति — इस संयोग का क्या कारण है ?

तस्य हेतुरविद्या ॥२४॥

तस्य — उस (अदर्शनरूपी संयोग अर्थात् अविवेक) का

हेतुः — कारण
अविद्या — अविद्या (है) ।

संगति — *अविद्या और संयोग के अभाव अर्थात् हान से क्या होता है?*

तदभावात् संयोगाभावो हानं तद् दृशेः कैवल्यम् ॥२५॥

तत् — उस (अविद्या की)
अभावात् — अनुपस्थिति से (अदर्शनरूपी)
संयोगः — संयोग (का)
अभावः — अभाव (ही)
हानम् — हान अर्थात् दुःख का अभाव (है और)
तत् — वही
दृशेः — द्रष्टा अर्थात् चितिशक्ति (का)
कैवल्यम् — कैवल्य अर्थात् केवल हो जाना (है) ।

संगति — *हानोपाय अर्थात् दुःख निवृत्ति का क्या उपाय है ?*

विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः ॥२६॥

अविप्लवा — (संशय और विपर्यय रहित) शुद्ध
विवेकख्यातिः — विवेकज्ञान
हान — हान (का)
उपायः — उपाय (है) ।

संगति — *विवेकख्याति में उत्पन्न प्रज्ञा का क्या स्वरूप है ?*

तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा ॥२७॥

तस्य — उस (निर्मल विवेकख्याति वाले योगी) की

सप्तधा — सात प्रकार की
प्रान्तभूमिः — सबसे ऊँची अवस्था वाली
प्रज्ञा — बुद्धि[२१] (होती है) ।

संगति — *इस प्रज्ञा की प्राप्ति का क्या उपाय है ?*

योगाङ्गाऽनुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः ॥२८॥

योग — योग (के)
अङ्ग — अङ्गों (के)
अनुष्ठानात् — अनुष्ठान से
अशुद्धिः — अशुद्धि (के)
क्षये — नाश होने पर
ज्ञान — ज्ञान (का)
दीप्तिः — प्रकाश
आविवेकख्यातेः — विवेकख्याति पर्यन्त (हो जाता है) ।

---

[२१] **सात प्रकार की प्रज्ञा** — हेय-शून्य अर्थात् दृश्य को जान लेना, हेयहेतु क्षीण अर्थात् द्रष्टा और दृश्य का संयोग दूर कर लेना, प्राप्यप्राप्त अर्थात् स्वरूप को प्राप्त कर लेना, चिकीर्षाशून्य अर्थात् विवेकख्याति का सम्पादन कर लेना, यह चार प्रकार की कार्य विमुक्ति प्रज्ञा है और चित्तसत्त्व-कृतार्थता अर्थात् चित्त का भोग और अपवर्ग देने का काम पूरा कर लेना, गुणलीनता अर्थात् चित्त का अपने कारणरूप गुणों में लीन हो जाना, आत्मस्थिति अर्थात् पुरुष का परमात्मा के स्वरूप में स्थित हो जाना, यह तीन प्रकार की चित्त विमुक्ति प्रज्ञा है ।

संगति — योग के अङ्गों के क्या नाम हैं ?

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि ॥२९॥

यम — यम,
नियम — नियम,
आसन — आसन,
प्राणायाम — प्राणायाम,
प्रत्याहार — प्रत्याहार,
धारणा — धारणा,
ध्यान — ध्यान (और)
समाधयः — समाधि, (ये योग के)
अष्टौ — आठ
अङ्गानि — अङ्ग (हैं) ।

संगति — व्यावहारिक यम क्या हैं ?

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥३०॥

अहिंसा — शरीर, वाणी और मन से समस्त प्राणियों के साथ वैर भाव छोड़ कर प्रेम पूर्वक रहना,
सत्य — यथार्थ ज्ञान,
अस्तेय — अपहरण का अभाव,
ब्रह्मचर्य — इन्द्रियों पर संयम कर के वीर्य की रक्षा करना (और)
अपरिग्रहाः — वस्तुओं का आवश्यकता से अधिक संग्रह न करना, (ये पाँच)
यमाः — यम (हैं) ।

संगति — यम किन किन अवस्थाओं में पालन करने योग्य हैं ?

जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम् ॥३१॥

जाति — जाति,
देश — स्थान,
काल — काल (और)
समय — विशेष नियम (की)
अनवच्छिन्नाः — सीमा से रहित (और)
सार्वभौमाः — सब अवस्थाओं में पालन करने योग्य, (ये पाँच यम)
महाव्रतम् — महाव्रत (हैं) ।

संगति — वैयक्तिक नियम क्या हैं ?

शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥३२॥

शौच — स्वच्छता,
संतोष — संतुष्टि,
तपः — तप,
स्वाध्याय — स्वाध्याय (और)
ईश्वर-प्रणिधानानि — ईश्वर-प्रणिधान, (ये पाँच)
नियमाः — नियम (हैं) ।

संगति — यम और नियम में विघ्नों को दूर करने के क्या उपाय हैं ?

वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम् ॥३३॥

वितर्क — वितर्कों (द्वारा यम और नियमों में)
बाधने — रुकावट होने पर
प्रतिपक्ष — विपरीत (भाव का)

भावनम् — चिन्तन (करना चाहिये) ।

***संगति** — प्रतिपक्ष-भावना क्या है ?*

वितर्का हिंसादयः कृतकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका मृदुमध्याधिमात्रा दुःखाज्ञानानन्तफला इति प्रतिपक्षभावनम् ॥३४॥

वितर्काः — वितर्क (यम और नियमों के विरोधी)
हिंसा — हिंसा
आदयः — आदि (भाव) हैं, (जो स्वयं)
कृत — किए हुए, (दूसरों से)
कारित — करवाए हुए (और दूसरों से)
अनुमोदिताः — समर्थन प्राप्त किए हुए, (इन तीन प्रकार के हैं);
लोभ — लोभ,
क्रोध — क्रोध (और)
मोह — मोह (जिन के)
पूर्वकाः — कारण (हैं);
मृदु — मृदु,
मध्य — मध्यम (और)
अधिमात्राः — तीव्र (जिन के भेद हैं);
दुःख — दुःख (और)
अज्ञान — अज्ञान (का)
अनन्त — अनन्त (होना जिन का)
फलाः — फल (है);
इति — ऐसा (विचार करना)
प्रतिपक्ष — प्रतिपक्ष (की)

भावनम् — भावना (है) ।

***संगति** — अहिंसा में स्थिति होने से क्या होता है ?*

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः ॥३५॥

अहिंसा — अहिंसा (में)
प्रतिष्ठायाम् — दृढ़ स्थिति हो जाने पर
तत् — उस (अहिंसक योगी के)
संनिधौ — निकट (सब का)
वैर — वैर
त्यागः — छूट (जाता है) ।

***संगति** — सत्य में स्थिति होने से क्या होता है ?*

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् ॥३६॥

सत्य — सत्य (में)
प्रतिष्ठायाम् — दृढ़ स्थिति हो जाने पर (उस योगी की)
क्रिया — क्रिया अर्थात् कर्म
फल — फल (का)
आश्रयत्वम् — आश्रय (बनती है) ।

***संगति** — अस्तेय में दृढ़ होने से क्या होता है ?*

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ॥३७॥

अस्तेय — अस्तेय (में)
प्रतिष्ठायाम् — दृढ़ स्थिति हो जाने पर
सर्व — सब

रत्न — रत्नों (की)
उप-स्थानम् — प्राप्ति (होती है) ।

संगति — ब्रह्मचर्य में दृढ़ होने से क्या होता है ?

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः ॥३८॥
ब्रह्मचर्य — ब्रह्मचर्य (में)
प्रतिष्ठायाम् — दृढ़ स्थिति हो जाने पर (शारीरिक, मानसिक और आत्मिक)
वीर्य — सामर्थ्य (का)
लाभः — लाभ (होता है) ।

संगति — अपरिग्रह में स्थिति होने से क्या होता है ?

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः ॥३९॥
अपरिग्रह — अपरिग्रह (की)
स्थैर्ये — स्थिरता में
जन्म — जन्म (के)
कथन्ता — कैसे-पन अर्थात् भूत और भविष्य (का)
सम्बोधः — साक्षात् (होता है) ।

संगति — बाह्य शौच से क्या होता है ?

शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः ॥४०॥
शौचात् — शौच से
स्व — अपने
अङ्ग — अङ्गों (से)

जुगुप्सा — अरुचि अर्थात् राग और ममत्व रहित हो जाना (और)
परैः — दूसरों से
असंसर्गः — संसर्ग का अभाव (होता है) ।

संगति — आभ्यन्तर शौच का क्या फल है ?

सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च ॥४१॥
सत्त्व — (आभ्यन्तर शौच की सिद्धि से) चित्त (की)
शुद्धि — शुद्धि,
सौमनस्य — मन की स्वच्छता,
ऐकाग्र्य — एकाग्रता,
इन्द्रिय — इन्द्रियों (पर)
जय — जीत (और)
आत्म-दर्शन — आत्म दर्शन, (यह पाँच प्रकार की)
योग्यत्वानि — योग्यता
च — भी (प्राप्त होती है) ।

संगति — संतोष का क्या फल है ?

संतोषादनुत्तमसुखलाभः ॥४२॥
संतोषात् — संतोष (से)
अनुत्तम — परम
सुख — सुख
लाभः — प्राप्त (होता है) ।

संगति — तप का क्या फल है ?

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः ॥४३॥

तपसः — तप द्वारा
अशुद्धि — अशुद्धि (के)
क्षयात् — नाश होने से
काय — शरीर (और)
इन्द्रिय — इन्द्रियों (की)
सिद्धिः — सिद्धि (प्राप्त होती है) ।

संगति — स्वाध्याय का क्या फल है ?

स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः ॥४४॥

स्वाध्यायात् — स्वाध्याय से
इष्ट — इष्ट
देवता — देवता (का)
सम्प्रयोगः — साक्षात् (होता है) ।

संगति — ईश्वर-प्रणिधान का क्या फल है ?

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात् ॥४५॥

समाधि — समाधि (की)
सिद्धिः — सिद्धि
ईश्वर-प्रणिधानात् — ईश्वर-प्रणिधान से (होती है) ।

संगति — आसन क्या है ?

स्थिरसुखमासनम् ॥४६॥

स्थिर — (जो) स्थिर (और)

सुखम् — सुखदायी (हो, वह)
आसनम् — आसन (है) ।

संगति — आसन की सिद्धि के क्या उपाय हैं ?

प्रयत्नशैथिल्यानन्त्यसमापत्तिभ्याम् ॥४७॥

प्रयत्न — (उक्त आसन में) प्रयत्न (की)
शैथिल्य — शिथिलता (से और)
आनन्त्य — अनन्त अर्थात् आकाश आदि (में)
समापत्तिभ्याम् — समापत्ति द्वारा (आसन सिद्ध होता है) ।

संगति — आसन का क्या फल है ?

ततो द्वन्द्वानभिघातः ॥४८॥

ततः — उस (आसन की सिद्धि) से
द्वन्द्वाः — द्वन्द्वों अर्थात् भूख-प्यास, हर्ष-विषाद आदि (की)
अनभिघातः — चोट नहीं (लगती) ।

संगति — प्राणायाम क्या है ?

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः ॥४९॥

तस्मिन् — उस (आसन के)
सति — स्थिर (हो जाने पर)
श्वास — साँस भीतर लेने (और)
प्रश्वासयोः — साँस बाहर छोड़ने (की)
गति — गति (का)
विच्छेदः — रुकना

प्राणायामः — प्राणायाम (है) ।

संगति — प्राणायाम का क्या स्वरूप है ?

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः ॥५०॥

बाह्य — साँस बाहर निकाल कर उसकी स्वाभाविक गति का रुकना अर्थात् रेचक,
आभ्यन्तर — साँस अंदर खींच कर उसकी स्वाभाविक गति का रुकना अर्थात् पूरक (और)
स्तम्भ — साँस की इन दोनो गतियों का रुकना अर्थात् कुम्भक
वृत्तिः — वृत्ति (वाला, यह तीन प्रकार का प्राणायाम)
देश — देश,
काल — समय (और)
संख्याभिः — संख्या द्वारा
परिदृष्टः — देखा अर्थात् नापा हुआ
दीर्घ — लम्बा (और)
सूक्ष्मः — हल्का (होता है) ।

संगति — चौथे प्रकार का प्राणायाम कौन सा है ?

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः ॥५१॥

बाह्य — बाहर (और)
आभ्यन्तर — अंदर (के)
विषय — विषय (को ज्ञानपूर्वक)
आक्षेपी — त्याग कर देने से (अपने आप होने वाला)
चतुर्थः — चौथा (प्राणायाम है) ।

संगति — प्राणायाम का पहला फल क्या है ?

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् ॥५२॥

ततः — उस (प्राणायाम के अभ्यास से)
प्रकाश — प्रकाश अर्थात् विवेकज्ञान (पर पड़ा अज्ञान का)
आवरणम् — आवरण
क्षीयते — नष्ट हो जाता है ।

संगति — प्राणायाम का दूसरा फल क्या है ?

धारणासु च योग्यता मनसः ॥५३॥

च — और (प्राणायाम की सिद्धि से)
धारणासु — धारणाओं में
मनसः — मन की
योग्यता — योग्यता (भी हो जाती है) ।

संगति — अब प्रत्याहार का क्या लक्षण है ?

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः ॥५४॥

इन्द्रियाणाम् — इन्द्रियों का
स्व — अपने
विषय — विषयों (के साथ)
असम्प्रयोगे — सम्बन्ध से रहित होने पर
चित्तस्य — चित्त के
स्वरूप — स्वरूप (की)
अनुकारः — नकल

इव — जैसी (करना)
प्रत्याहारः — प्रत्याहार (कहलाता है) ।

संगति — *प्रत्याहार का क्या फल है ?*

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् ॥५५॥
ततः — उस (प्रत्याहार) से
इन्द्रियाणाम् — इन्द्रियों का (सबसे)
परमा — उत्तम
वश्यता — वशीकरण (होता है) ।

-ॐ-

विभूतिपाद

संगति — *अब अश्रद्धालु को श्रद्धापूर्वक योग में प्रवृत्त करने के लिए योग की विभूतियाँ बतलाई जाती हैं । यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार के बाद धारणा की व्याख्या की जाती है ।*

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा ॥१॥
चित्तस्य — चित्त का (किसी)
देश — स्थान (विशेष में)
बन्धः — बाँधना
धारणा — धारणा (कहलाता है) ।

संगति — *ध्यान क्या है ?*

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ॥२॥
तत्र — उस (धारणा) में
प्रत्यय — वृत्ति का
एकतानता — एक सा बना रहना
ध्यानम् — ध्यान (कहलाता है) ।

संगति — *समाधि क्या है ?*

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः ॥३॥
तदेव — उस (ध्यान में केवल ध्येय का)
अर्थ — अर्थ
मात्र — मात्र (सा)

निर्भासम् — भासना (और निज)
स्वरूप — स्वरूप (से)
शून्यम् — शून्य
इव — जैसा (हो जाना)
समाधिः — समाधि (कहलाता है) ।

संगति — पूर्वोक्त धारणा, ध्यान और समाधि को क्या कहते हैं ?

त्रयमेकत्र संयमः ॥४॥

त्रयम् — तीनों अर्थात् धारणा, ध्यान और समाधि (का एक ही ध्येय विषय में)
एकत्र — एक साथ (होना)
संयमः — संयम (कहलाता है) ।

संगति — संयम को जीत लेने का क्या फल है ?

तज्जयात्प्रज्ञालोकः ॥५॥

तत् — उस (संयम के)
जयात् — सिद्ध होने से
प्रज्ञा — प्रज्ञा (का)
आलोकः — प्रकाश (होता है) ।

संगति — संयम का क्या उपयोग है ?

तस्य भूमिषु विनियोगः ॥६॥

तस्य — उस (संयम का चित्त की स्थूल से सूक्ष्म)
भूमिषु — भूमियों में

विनियोगः — प्रयोग (करना चाहिए) ।

संगति — धारणा, ध्यान और समाधि का योग के पहले पाँच अंगों से क्या सम्बंध है ?

त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः ॥७॥

पूर्वेभ्यः — पहले पाँचों अङ्गों अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार (की अपेक्षा ये)
त्रयम् — तीनों अर्थात् धारणा, ध्यान और समाधि
अन्तरङ्गम् — अंदर के अङ्ग (हैं) ।

संगति — धारणा, ध्यान और समाधि का निर्बीज समाधि से क्या सम्बंध है ?

तदपि बहिरङ्गं निर्बीजस्य ॥८॥

तत् — वे (धारणा, ध्यान और समाधि)
अपि — भी
निर्बीजस्य — असम्प्रज्ञात समाधि के
बहिरङ्गम् — बाहर के अङ्ग (हैं) ।

संगति — असम्प्रज्ञात समाधि जो सम्प्रज्ञात समाधि के बाद की अवस्था है, उस में निरोध-परिणाम क्या है ?

व्युत्थाननिरोधसंस्कारयोरभिभवप्रादुर्भावौ निरोधक्षणचित्तान्वयो निरोधपरिणामः ॥९॥

व्युत्थान — एकाग्रता अथवा सम्प्रज्ञात समाधि (और)
निरोध — पर-वैराग्य (के)

संस्कारयोः — संस्कारों का (क्रम से)
अभिभव — दबना (और)
प्रादुर्भावौ — प्रकट (होना),
चित्त — चित्त (का इन दोनों संस्कारों से)
निरोध — निरोध
क्षण — काल (में)
अन्वयः — सम्बन्ध (होना)
निरोध — निरोध
परिणामः — परिणाम[२२] (है) ।

संगति — *निरोध-संस्कार का क्या फल है ?*

---

[२२] **धर्म-परिणाम** — पूर्व धर्म की निवृत्ति और नये धर्म की प्राप्ति की संभावना ।

लक्षण-परिणाम — अनागत अर्थात् धर्म का वर्तमान में प्रकट (उदित) होने से पहले भविष्य में छिपा रहना, वर्तमान अर्थात् धर्म का भविष्य को छोड़ कर वर्तमान में प्रकट होना, अतीत अर्थात् धर्म का वर्तमान को छोड़ कर भूतकाल में छिप जाना ।

अवस्था-परिणाम — धर्म के अनागत लक्षण से वर्तमान लक्षण और वर्तमान लक्षण से अतीत लक्षण में जाने तक उसकी अवस्था को क्रम से दृढ़ अथवा दुर्बल करने में प्रतिक्षण परिणाम होना ।

इस तरह आधार स्वरूप धर्मी का धर्मों से, धर्म का लक्षणों से और लक्षणों का अवस्था से परिणाम होता रहता है ।

तस्य प्रशान्तवाहिता संस्कारात् ॥१०॥

तस्य — उस (चित्त का)
प्रशान्त — प्रशान्त
वाहिता — बहना (निरोध)
संस्कारात् — संस्कार से (होता है) ।

संगति — *सम्प्रज्ञात समाधि में समाधि-परिणाम क्या है ?*

सर्वार्थतैकाग्रतयोः क्षयोदयौ चित्तस्य समाधिपरिणामः ॥११॥

सर्व-अर्थता — (चित्त की) सब प्रकार के विषयों (और)
एकाग्रतयोः — किसी एक ही ध्येय विषय को चिन्तन करने वाली वृत्ति का (क्रम से)
क्षय — क्षय (और)
उदयौ — उदय होना
चित्तस्य — चित्त का
समाधि — समाधि
परिणामः — परिणाम (है) ।

संगति — *चित्त की समाहित अवस्था में एकाग्रता-परिणाम क्या है ?*

ततः पुनः शान्तोदितौ तुल्यप्रत्ययौ चित्तस्यैकाग्रतापरिणामः ॥१२॥

ततः — तब
पुनः — फिर (उक्त)
शान्त — शान्त (और)
उदितौ — उदित हुई

प्रत्ययौ — वृत्तियों (का एक ही ध्येय विषय में)
तुल्य — समान (हो जाना)
चित्तस्य — चित्त का
एकाग्रता — एकाग्रता
परिणामः — परिणाम (है) ।

संगति — चित्त के सदृश ही भूत और इन्द्रियों के क्या परिणाम हैं ?

एतेन भूतेन्द्रियेषु धर्मलक्षणावस्थापरिणामा व्याख्याताः ॥१३॥
एतेन — इस (चित्त के परिणाम के समान ही)
भूत — भूत (और)
इन्द्रियेषु — इन्द्रियों में
धर्म — धर्म,
लक्षण — लक्षण (और)
अवस्था — अवस्था (के)
परिणामाः — परिणाम
व्याख्याताः — व्याख्यान (किए हुए जानने चाहिएं) ।

संगति — धर्मों के आधार में कौन विद्यमान है ?

शान्तोदिताव्यपदेश्यधर्मानुपाती धर्मी ॥१४॥
शान्त — (उन परिणामों के) अतीत,
उदित — वर्तमान (और)
अव्यपदेश्य — भविष्यत्
धर्म — धर्मों (में आधाररूप से)
अनुपाती — विद्यमान
धर्मी — धर्मी (है) ।

संगति — एक ही धर्मी के अनेक धर्म किस प्रकार हो सकते हैं ?

क्रमान्यत्वं परिणामान्यत्वे हेतुः ॥१५॥
क्रम — क्रमों (की)
अन्यत्वम् — भिन्नता
परिणाम — परिणाम (की)
अन्यत्वे — भिन्नता में
हेतुः — कारण (है) ।

संगति — परिणामों में संयम करने से क्या होता है ?

परिणामत्रयसंयमादतीतानागतज्ञानम् ॥१६॥
त्रय — तीनों अर्थात् धर्म, लक्षण और अवस्था
परिणाम — परिणामों (में)
संयमात् — संयम करने से
अतीत — भूत (और)
अनागत — भविष्य (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — सब प्राणियों के शब्द का ज्ञान कैसे होता है ?

शब्दार्थप्रत्ययानामितरेतराध्यासात् संकरस्तत्प्रविभागसंयमात् सर्वभूतरुतज्ञानम् ॥१७॥
शब्द — शब्द,
अर्थ — अर्थ (और)
प्रत्ययानाम् — ज्ञान के
इतर-इतर — परस्पर

अध्यासात् — मिथ्या आरोपण से
संकरः — अभेद (भासना होता है);
तत् — उन (शब्द, अर्थ और ज्ञान) के
प्रविभाग — विभाग (में)
संयमात् — संयम करने से
सर्व — सब
भूत — भूत (प्राणियों की)
रुत — वाणी (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *पूर्व जन्म का ज्ञान कैसे होता है ?*

संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम् ॥१८॥

संस्कार — (संयम द्वारा) संस्कारों (का)
साक्षात् — साक्षात्
करणात् — करने से
पूर्व — पूर्व
जाति — जन्म (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *पर-चित्त का ज्ञान कैसे होता है ?*

प्रत्ययस्य परचित्तज्ञानम् ॥१९॥

प्रत्ययस्य — (संयम द्वारा) दूसरे के चित्त की वृत्ति (को साक्षात् करने से)
पर — दूसरे (के)
चित्त — चित्त (का)

ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *पूर्वोक्त चित्त-संयम का क्या भेद है ?*

न च तत् सालम्बनं तस्याविषयीभूतत्वात् ॥२०॥

च — किंतु
तत् — वह (दूसरे का)
आलम्बनम् — विषय सहित (चित्त)
स — विषय सहित (साक्षात्)
न — नहीं (होता, क्योंकि)
तस्य — वह (चित्त)
भूतत्वात् — उस संयम (का)
अविषयी — विषय नहीं (था) ।

संगति — *योगी अन्तर्धान कैसे होता है ?*

कायरूपसंयमात् तद्ग्राह्यशक्तिस्तम्भे चक्षुःप्रकाशा सम्प्रयोगेऽन्तर्धानम् ॥२१॥

काय — शरीर (के)
रूप — रूप (में)
संयमात् — संयम करने से (और)
तत् — उसकी
ग्राह्य — ग्राह्य
शक्ति — शक्ति
स्तम्भे — रोकने से (दूसरे की)
चक्षुः — आँखों (के)
प्रकाश — प्रकाश (का)

असम्प्रयोगे — संयोग न होने पर (योगी)
अन्तर्धानम् — अन्तर्धान (होता है) ।

संगति — मृत्यु का ज्ञान कैसे होता है ?

सोपक्रमं निरुपक्रमं च कर्म तत्संयमादपरान्तज्ञानमरिष्टेभ्यो वा ॥२२॥

सोपक्रमम् — आरम्भ सहित अर्थात् तीव्र वेग वाले कर्म जिनका फल आरम्भ हो चुका है
च — और
निरुपक्रमम् — आरम्भ रहित अर्थात् मन्द वेग वाले कर्म जिनका फल अभी आरम्भ नहीं हुआ, (इन दो प्रकार के)
कर्म — कर्मों
तत् — में
संयमात् — संयम करने से,
वा — अथवा,
अरिष्टेभ्यः — उल्टे चिह्नों से,
अपरान्त — मृत्यु (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — मैत्री आदि बल कैसे प्राप्त होते हैं ?

मैत्र्यादिषु बलानि ॥२३॥

मैत्री — मैत्री
आदिषु — आदि में (संयम करने से मैत्री, करुणा और मुदिता)
बलानि — बल (प्राप्त होते हैं) ।

संगति — हाथी जैसा बल कैसे प्राप्त हो ?

बलेषु हस्तिबलादीनि ॥२४॥

बलेषु — (भिन्न-भिन्न) बलों में (संयम करने से)
हस्ति — हाथी
आदीनि — आदि के (बल के सदृश भिन्न-भिन्न)
बल — बल (प्राप्त होते हैं) ।

संगति — सूक्ष्म, आड़ वाली और दूर की वस्तुओं का ज्ञान कैसे होता है ?

प्रवृत्त्यालोकन्यासात् सूक्ष्मव्यवहितविप्रकृष्टज्ञानम् ॥२५॥

प्रवृत्ति — (ज्योतिष्मति) प्रवृत्ति (का)
आलोक — प्रकाश
न्यासात् — डालने से
सूक्ष्म — सूक्ष्म अर्थात् इन्द्रियातीत,
व्यवहित — व्यवधान अर्थात् आड़ वाली (और)
विप्रकृष्ट — दूर की (वस्तुओं का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — भुवन-ज्ञान कैसे होता है ?

भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात् ॥२६॥

सूर्ये — सूर्य (सुषुम्ना[२३]) में

[२३] **तीन मुख्य नाड़ियाँ** — मेरुदण्ड में सुषुम्ना (सुषुम्ना में वज्रा, वज्रा में चित्रिणी और चित्रिणी में ब्रह्म नाड़ी), इड़ा और पिंगला ।

संयमात् — संयम करने से
भुवन — भुवनों अर्थात् भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्य, (इन सात लोकों का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *नक्षत्रों का ज्ञान कैसे होता है ?*

चन्द्रे ताराव्यूहज्ञानम् ॥२७॥
चन्द्रे — चन्द्रमा में (संयम करने से)
तारा — ताराओं अर्थात् नक्षत्रों (के)
व्यूह — व्यूह (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *ताराओं और नक्षत्रों की गति का ज्ञान कैसे होता है ?*

ध्रुवे तद्गतिज्ञानम् ॥२८॥
ध्रुवे — ध्रुव तारा में (संयम करने से)
तत् — उन (ताराओं की)
गति — गति (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *अब संयम की आभ्यन्तर विभूतियों का वर्णन करते हैं ।*

नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम् ॥२९॥
नाभि — नाभि

चक्रे — चक्र[२४] में (संयम करने से)
काय — शरीर (के)
व्यूह — व्यूह (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

संगति — *भूख और प्यास की निवृत्ति कैसे होती है ?*

कण्ठकूपे क्षुत्पिपासानिवृत्तिः ॥३०॥
कण्ठ — कण्ठ (के)
कूपे — गड्ढे में (संयम करने से)
क्षुत् — भूख (और)
पिपासा — प्यास (की)
निवृत्तिः — निवृत्ति (होती है) ।

संगति — *कूर्म नाड़ी में संयम करने से क्या होता है ?*

कूर्मनाड्यां स्थैर्यम् ॥३१॥
कूर्म — (कण्ठ कूप के नीचे छाती में कछुवे के आकार वाली) कूर्म
नाड्याम् — नाड़ी में (संयम करने से)
स्थैर्यम् — स्थिरता (होती है) ।

संगति — *सिद्धों के दर्शन कैसे होते हैं ?*

---

[२४] **सात चक्र** — मूलाधार (कुण्डलिनी का स्थान), स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा (तीसरा-नेत्र) और सहस्रार ।

मूर्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम् ॥३२॥
मूर्ध — मूर्ध (कपाल में ब्रह्मरन्ध्र की)
ज्योतिषि — ज्योति में (संयम करने से)
सिद्ध — सिद्ध (पुरुषों के)
दर्शनम् — दर्शन (होते हैं) ।

***संगति** — प्रातिभ-ज्ञान से क्या हो सकता है ?*

प्रातिभाद्वा सर्वम् ॥३३॥
वा — अथवा (योगी बिना संयम के भी)
प्रातिभात् — प्रातिभ (ज्ञान से)
सर्वम् — सब कुछ (जान लेता है) ।

***संगति** — चित्त का ज्ञान कैसे होता है ?*

हृदये चित्तसंवित् ॥३४॥
हृदये — हृदय में (संयम करने से)
चित्त — चित्त (का)
संवित् — ज्ञान (होता है) ।

***संगति** — पुरुष का ज्ञान कैसे होता है ?*

सत्त्वपुरुषयोरत्यन्तासंकीर्णयोः प्रत्ययाविशेषो भोगः परार्थान्यस्वार्थसंयमात् पुरुषज्ञानम् ॥३५॥
सत्त्व — चित्त (और)
पुरुषयोः — पुरुष
अत्यन्त-असंकीर्णयोः — परस्पर अत्यन्त भिन्न हैं; (इन दोनों) की

प्रत्ययः — प्रतीतियों (का)
अविशेषः — अभेद (ही)
भोगः — भोग (है); (उनमें से)
परार्थ — परार्थ (प्रतीति से)
अन्य — भिन्न (जो)
स्वार्थ — स्वार्थ (प्रतीति है, उसमें)
संयमात् — संयम करने से
पुरुष — पुरुष (का)
ज्ञानम् — ज्ञान (होता है) ।

***संगति** — पूर्वोक्त स्वार्थ-प्रत्यय के संयम की क्या विभूतियाँ हैं ?*

ततः प्रातिभश्रावणवेदनादर्शास्वादवार्ता जायन्ते ॥३६॥
ततः — उस (स्वार्थ में संयम करने से)
प्रातिभ — सूक्ष्म, व्यवहित, विप्रकृष्ट, अतीत और अनागत वस्तुओं का प्रत्यक्ष,
श्रावण — दिव्य शब्द,
वेदना — दिव्य स्पर्श,
आदर्श — दिव्य रूप,
आस्वाद — दिव्य स्वाद (और)
वार्ता — दिव्य गंध, (ये छः प्रकार के ज्ञान)
जायन्ते — उत्पन्न होते हैं ।

***संगति** — पूर्वोक्त छः प्रकार के ज्ञान के क्या फल हैं ?*

ते समाधावुपसर्गा व्युत्थाने सिद्धयः ॥३७॥
ते — वे (छः प्रकार के ज्ञान)

समाधौ — समाधि अर्थात् पुरुष दर्शन में
उपसर्गाः — विघ्न (और)
व्युत्थाने — व्युत्थान में
सिद्धयः — सिद्धियाँ (हैं) ।

संगति — चित्त का पर-शरीर में आवेश कैसे होता है ?

बन्धकारणशैथिल्यात्प्रचारसंवेदनाच्च चित्तस्य परशरीरावेशः ॥३८॥

बन्ध — बन्ध (के)
कारण — कारण अर्थात् सकाम कर्म और उनकी वासनाओं (को)
शैथिल्यात् — शिथिल करने से
च — और (चित्त की)
प्रचार — गति (के मार्ग को)
संवेदनात् — जानने से
चित्तस्य — चित्त अर्थात् सूक्ष्म शरीर का
पर — दूसरे
शरीर — शरीर (में)
आवेशः — प्रवेश (हो सकता है) ।

संगति — उदान प्राण को जीत लेने से कौन सी विभूतियाँ प्राप्त होती हैं ?

उदानजयाज्जलपङ्ककण्टकादिष्वसङ्ग उत्क्रान्तिश्च ॥३९॥

उदान — (संयम द्वारा) उदान (प्राण को)
जयात् — जीतने से
जल — जल,

पङ्क — कीचड़ (और)
कण्टक — काँटों
आदिषु — आदि में (योगी के शरीर का)
असङ्गः — संयोग नहीं होता
च — और
उत्क्रान्तिः — ऊर्ध्व गति (होती है) ।

संगति — समान प्राण को जीत लेने से क्या उपलब्ध होता है ?

समानजयाज्ज्वलनम् ॥४०॥

समान — (संयम द्वारा) समान (प्राण को)
जयात् — जीतने से (योगी)
ज्वलनम् — दीप्तिमान् (होता है) ।

संगति — दिव्य-श्रोत्र कैसे प्राप्त होता है ?

श्रोत्राकाशयोः सम्बन्धसंयमाद्दिव्यं श्रोत्रम् ॥४१॥

श्रोत्र — श्रोत्र (और)
आकाशयोः — आकाश के
सम्बन्ध — सम्बन्ध (में)
संयमात् — संयम करने से
दिव्यम् — दिव्य
श्रोत्रम् — श्रोत्र (प्राप्त होता है) ।

संगति — आकाश-गमन विभूति कैसे प्राप्त होती है ?

कायाकाशयोः सम्बन्धसंयमाल्लघुतूलसमापत्तेश्चाकाशगमनम् ॥४२॥

काय — शरीर (और)
आकाशयोः — आकाश के
सम्बन्ध — सम्बन्ध (में)
संयमात् — संयम करने से
च — और
लघु — हल्की (वस्तु, जैसे)
तूल — रूई (आदि में)
समापत्तेः — समापत्ति (करने से)
आकाशगमनम् — आकाश-गमन (सिद्धि प्राप्त होती है) ।

संगति — प्रकाश के आवरण का क्षय कैसे होता है ?

बहिरकल्पिता वृत्तिर्महाविदेहा ततः प्रकाशावरणक्षयः ॥४३॥

बहिः — (शरीर से) बाहर (मन की स्थिति जो)
अकल्पिता — कल्पना न की हुई हो, (वह)
वृत्तिः — वृत्ति
महाविदेहा — महाविदेहा (कहलाती है);
ततः — उस (से)
प्रकाश — प्रकाश (के)
आवरण — आवरण अर्थात् अज्ञान (का)
क्षयः — नाश (होता है) ।

संगति — भूत-जय कैसे प्राप्त होता है ?

स्थूलस्वरूपसूक्ष्मान्वयार्थवत्त्वसंयमाद् भूतजयः ॥४४॥

स्थूल — आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी;
स्वरूप — आकाश में शब्द, वायु में स्पर्श, अग्नि में रूप, जल में रस और पृथ्वी में गन्ध;
सूक्ष्म — शब्द-तन्मात्रा, स्पर्श-तन्मात्रा, रूप-तन्मात्रा, रस-तन्मात्रा और गन्ध-तन्मात्रा;
अन्वय — सत्त्व, रजस् और तमस् का मिला हुआ धर्म (और)
अर्थवत्त्व — प्रकृति का पुरुष के लिए भोग और अपवर्ग; (इन में, क्रम से,)
संयमात् — संयम करने से (पाँच)
भूत — भूतों (पर)
जयः — विजय (प्राप्त होती है) ।

संगति — पूर्वोक्त भूत-जय का क्या फल है ?

ततोऽणिमादिप्रादुर्भावः कायसम्पत्तद्धर्मानभिघातश्च ॥४५॥

ततः — उस (भूत-जय से)
अणिमा — अणिमा
आदि — आदि (आठ सिद्धियों[२५] का)

---

[२५] **आठ सिद्धियाँ** — अणिमा अर्थात् शरीर का सूक्ष्म होना, लघिमा अर्थात् शरीर का हल्का होना, महिमा अर्थात् शरीर का बड़ा होना, प्राप्ति अर्थात् इच्छित भौतिक पदार्थ की प्राप्ति होना, प्राकाम्य अर्थात् इच्छा पूर्ण होना, वशित्व अर्थात् पाँच भूतों और पदार्थों का वश में होना, ईशितृत्व अर्थात् पाँच भूतों और पदार्थों की उत्पत्ति

प्रादुर्भावः — प्रकट होना,
काय — शरीर
सम्पत् — सम्पदा (की प्राप्ति)
च — और
तत् — उन अर्थात् पाँचों भूतों (के)
धर्म — धर्मों (से)
अनभिघातः — रुकावट का न होना, (ये तीनों फल प्राप्त होते हैं) ।

***संगति** — काय-सम्पत् क्या है ?*

रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वानि कायसम्पत् ॥४६॥

रूप — रूप,
लावण्य — लावण्य,
बल — बल (और)
वज्र — वज्र (के समान)
संहननत्वानि — संगठन, (ये चारों)
काय — शरीर की
सम्पत् — सम्पदा (कहलाते हैं) ।

***संगति** — ग्रहण-इन्द्रियों में संयम का क्या फल है ?*

ग्रहणस्वरूपास्मितान्वयार्थवत्त्वसंयमादिन्द्रियजयः ॥४७॥

ग्रहण — इन्द्रियों की विषयाभिमुखी वृत्ति,

और विनाश का सामर्थ्य होना, यत्रकामावसायित्व अर्थात् संकल्प का पूरा होना ।

स्वरूप — स्वरूप,
अस्मिता — अस्मिता,
अन्वय — अन्वय (और)
अर्थवत्त्व — अर्थवत्त्व, (इन पाँचों अवस्थाओं में)
संयमात् — संयम करने से
इन्द्रिय — इन्द्रियों (पर)
जयः — विजय (प्राप्त होती है) ।

***संगति** — इन्द्रिय-जय का क्या फल है ?*

ततो मनोजवित्वं विकरणभावः प्रधानजयश्च ॥४८॥

ततः — उस (इन्द्रिय-जय से)
मनोजवित्वम् — मन के सदृश वेग वाला होना,
विकरणभावः — बिना शरीर के इन्द्रियों में विषयों को अनुभव करने की शक्ति का आना
च — और
प्रधान — प्रकृति (के विकारों पर)
जयः — वशीकरण (होना, ये तीनों सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं) ।

***संगति** — ग्राह्य और ग्रहण के बाद ग्रहीतृ अर्थात् चित्त में संयम का क्या फल है ?*

सत्त्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वं च ॥४९॥

सत्त्व — चित्त (और)
पुरुष — पुरुष (के)
अन्यता — भेद (को)

ख्याति — जानने
मात्रस्य — वाला (योगी)
सर्व — सारे
भाव — भावों (का)
अधिष्ठातृत्वम् — मालिक
च — और
सर्व — सब का
ज्ञातृत्वम् — जानने वाला (होता है) ।

संगति — विवेकख्याति से आगे की अवस्था क्या है ?

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम् ॥५०॥

तत् — उस (विवेकख्याति) में
अपि — भी
वैराग्यात् — वैराग्य होने से
दोष — दोषों (के)
बीज — बीज (का)
क्षये — नाश होने पर
कैवल्यम् — कैवल्य (होता है) ।

संगति — अब साधकों को सावधान किया जाता है ।

स्थान्युपनिमन्त्रणे सङ्गस्मयाकरणं पुनरनिष्टप्रसङ्गात् ॥५१॥

स्थानि — (साधक को) स्थान वालों अर्थात् वितर्कानुगत, विचारानुगत, अस्मितानुगत और विवेकख्याति वालों (के)
उपनिमन्त्रणे — आदर भाव से
सङ्ग — लगाव (और)

स्मय — घमंड
अकरणम् — नहीं करना चाहिए, (क्योंकि इस से)
पुनः — फिर (से)
अनिष्ट — अमंगल (होना)
प्रसङ्गात् — सम्भव (है) ।

संगति — विवेकज-ज्ञान कैसे उत्पन्न होता है ?

क्षणतत्क्रमयोः संयमाद्विवेकजं ज्ञानम् ॥५२॥

क्षण — क्षण (और)
तत् — उसके
क्रमयोः — क्रमों (में)
संयमात् — संयम करने से
विवेकजम् — विवेक
ज्ञानम् — ज्ञान (उत्पन्न होता है) ।

संगति — विवेकज-ज्ञान कहाँ प्रयुक्त होता है ?

जातिलक्षणदेशैरन्यतानवच्छेदात् तुल्ययोस्ततः प्रतिपत्तिः ॥५३॥

जाति — (जब दो समतुल्य वस्तुओं का) जाति,
लक्षण — लक्षण (और)
देशैः — देश (के)
अन्यता — भेद (से)
अनवच्छेदात् — निश्चय न हो (सके, तब उन)
तुल्ययोः — तुल्य (वस्तुओं) का
ततः — उस (विवेकज्ञान से)
प्रतिपत्तिः — निश्चय (होता है) ।

संगति — विवेकज-ज्ञान की पूर्ण परिभाषा क्या है ?

तारकं सर्वविषयं सर्वथाविषयमक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम् ॥५४॥

तारकम् — बिना निमित्त के अपनी प्रभा से स्वयं उत्पन्न होने वाला,
सर्व — सब (को)
विषयम् — जानने वाला,
सर्वथा — सब प्रकार (से)
विषयम् — विषय को जानने वाला
च — और
अक्रमम् — बिना क्रम के अर्थात् एक ही साथ ज्ञान उत्पन्न करने वाला,
इति — यह
विवेकजम् — विवेकज
ज्ञानम् — ज्ञान (है) ।

संगति — कैवल्य कैसे होता है ?

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति ॥५५॥

सत्त्व — चित्त (और)
पुरुषयोः — पुरुष की
शुद्धि — शुद्धि
साम्ये — समान (होने पर)
कैवल्यम् — कैवल्य (होता है और यहाँ तीसरा पाद)
इति — समाप्त (होता है) ।

-ॐ-

कैवल्यपाद

संगति — कैवल्यपाद में उपयोगी-चित्त के निर्णय के लिए पाँच प्रकार की सिद्धियाँ और उन से उत्पन्न पाँच सिद्ध चित्तों का वर्णन है ।

जन्मौषधिमन्त्रतपःसमाधिजाःसिद्धयः ॥१॥

जन्म — जन्म,
औषधि — औषधि,
मन्त्र — मन्त्र,
तपः — तप (और)
समाधिजाः — समाधि, (इन पाँचों) से उत्पन्न (होने वाली)
सिद्धयः — सिद्धियाँ अर्थात् शरीर और इन्द्रियों आदि में विलक्षण शक्तियों का उदय होना (हैं) ।

संगति — शरीर और इन्द्रियों आदि में विलक्षण शक्ति का आ जाना अर्थात् एक आन्तरिक स्थिति से दूसरी स्थिति में बदलना किस प्रकार होता है ?

जात्यन्तरपरिणामः प्रकृत्यापूरात् ॥२॥

जाति-अन्तर — (शरीर और इन्द्रियों का औषधि, मन्त्र, तप और समाधि के अनुष्ठान से) एक जाति से दूसरी जाति (में)
परिणामः — बदल जाना अर्थात् सिद्धियों का आ जाना
प्रकृति — प्रकृतियों (के)
आपूरात् — भरने अर्थात् पूर्ण होने से (होता है) ।

संगति — निमित्त कारण अर्थात् औषधि, मन्त्र आदि प्रकृतियों की पूर्णता कैसे कर देते हैं ?

निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत् ॥३॥

निमित्तम् — निमित्त कारण अर्थात् औषधि, मन्त्र आदि
प्रकृतीनाम् — प्रकृतियों के
अप्रयोजकम् — प्रेरक नहीं होते,
तु — किंतु
ततः — उस (निमित्त कारण से)
क्षेत्रिकवत् — किसान की भाँति (पानी भरने के लिए खेत में मेढ़ जैसी)
वरणम् — रुकावट (को)
भेदः — तोड़ने (से प्रकृतियों की पूर्ति अपने आप हो जाती है) ।

संगति — इन चित्तों का निर्माण किस से होता है ?

निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात् ॥४॥

निर्माण — (जन्म, औषधि, तप, मन्त्र और समाधि के अनुष्ठान से) निर्मित (किए गए)
चित्तानि — चित्त
अस्मिता — अस्मिता अर्थात् चित्त के अहं-भाव (के कारण)
मात्रात् — मात्र से (होते हैं) ।

संगति — एक चित्त किस प्रकार अनेक चित्तों को नाना प्रकार की प्रवृत्तियों में नियुक्त कर सकता है ?

प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तमेकमनेकेषाम् ॥५॥

प्रवृत्ति — (निर्मित किए गए चित्तों के) कार्य
भेदे — भिन्न (होने पर भी)
एकम् — एक (अधिष्ठाता)
चित्तम् — चित्त
अनेकेषाम् — अनेकों (चित्तों का)
प्रयोजकम् — प्रेरक (होता है) ।

संगति — अब इन पाँच प्रकार की सिद्धियों से उत्पन्न चित्तों में से समाधि-जन्य चित्त की क्या विलक्षणता है ?

तत्र ध्यानजमनाशयम् ॥६॥

तत्र — उन (पाँच प्रकार के निर्मित सिद्ध चित्तों में से)
ध्यानजम् — ध्यान से उत्पन्न (होने वाला चित्त)
अनाशयम् — वासनाओं से रहित (होता है) ।

संगति — समाधि-जन्य चित्त वासना-रहित कैसे हो सकता है ?

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम् ॥७॥

योगिनः — योगी का
कर्म — कर्म
अशुक्ल — न पुण्य (होता है और)
अकृष्णम् — न पाप, अर्थात् निष्काम होता है (और)
इतरेषाम् — दूसरों का (पाप, पाप-पुण्य मिश्रित और पुण्य, इन)
त्रिविधम् — तीन प्रकार (का होता है) ।

संगति — साधारण चित्त द्वारा किए गए तीन प्रकार के कर्मों का क्या फल है ?

ततस्तद्विपाकानुगुणानामेवाभिव्यक्तिर्वासनानाम् ॥८॥

ततः — उन (तीन प्रकार के कर्मों अर्थात् शुक्ल, कृष्ण और शुक्लकृष्ण कर्मों से)
तत् — उन्हीं (के)
विपाक — फल (के)
अनुगुणानाम् — अनुकूल
एव — ही
वासनानाम् — वासनाओं की
अभिव्यक्तिः — अभिव्यक्ति (होती है) ।

संगति — अनेक जन्मों की वासनाएँ जन्म-जन्मान्तर के बाद भी वर्तमान जन्म की वासनाओं के रूप में कैसे प्रकट हो जाती हैं ?

जातिदेशकालव्यवहितानामप्यानन्तर्यं स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात् ॥९॥

जाति — (जन्म-मरण चक्र में) जन्म,
देश — स्थान (और)
काल — समय (के)
व्यवहितानाम् — व्यवधान अर्थात् अन्तराल (रहने पर)
अपि — भी (वर्तमान जाति के अनुसार वासना के संस्कारों के प्रकट होने में)
आनन्तर्यम् — रुकावट नहीं होती, (क्योंकि)
स्मृति — स्मृति

संस्कारयोः — संस्कारों के
एकरूपत्वात् — एक रूप (हो जाती है) ।

संगति — जब वासनाओं के अनुसार जन्म और कर्मों के अनुसार वासना हो, तो सब से पहले जन्म देने वाली वासना कहाँ से आयी ?

तासामनादित्वं चाशिषो नित्यत्वात् ॥१०॥

तासाम् — उन (वासनाओं) का
अनादित्वं — अनादि होना
च — भी (सिद्ध है, क्योंकि प्राणी में)
आशिषः — अपने बने रहने की इच्छा
नित्यत्वात् — नित्य (है) ।

संगति — जब वासनाएँ अनादि हैं तो उनका अभाव कैसे होगा ?

हेतुफलाश्रयालम्बनैः संगृहीतत्वादेषामभावे तदभावः ॥११॥

हेतु — अविद्या;
फल — जाति, आयु और भोग;
आश्रय — चित्त (और)
आलम्बनैः — इन्द्रियों के विषयों; (इन चारों से वासनाओं का)
संगृहीतत्वात् — संगृह (होता है, इसलिए)
एषाम् — इन अर्थात् हेतु, फल, आश्रय और आलम्बन के
अभावे — अभाव में
तत् — उन (वासनाओं) का (भी)
अभावः — अभाव (हो जाता है) ।

संगति — यदि वासनाएं अनादि हैं तो वासनाओं और उन के हेतु का सर्वथा अभाव कैसे हो सकता है ?

अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यध्वभेदाद्धर्माणाम् ॥१२॥

अतीत — (उक्त अभाव में भी वासनाएँ और उन के हेतु) भूत (और)
अनागतम् — भविष्यत् अर्थात् अव्यक्त
स्वरूपतः — स्वरूप से (विद्यमान)
अस्ति — रहते हैं अर्थात् उन का सर्वथा नाश नहीं होता, (क्योंकि)
धर्माणाम् — धर्मों अर्थात् वासना और हेतु का
अध्व-भेदात् — काल से भेद (होता है) ।

संगति — धर्मों का क्या स्वरूप है ?

ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः ॥१३॥

ते — वे (समस्त धर्म)
व्यक्त — प्रकट (और)
सूक्ष्माः — सूक्ष्म (स्थिति में सदैव सत्त्व, रजस् और तमस्)
गुणात्मानः — गुण स्वरूप (ही रहते हैं) ।

संगति — जब तीनों गुण ही सम्पूर्ण पदार्थों के कारण हैं तो वस्तुओं का रूप अलग अलग कैसे हो सकता है ?

परिणामैकत्वाद्वस्तुतत्त्वम् ॥१४॥

परिणाम — (तीनों गुणों के) परिणाम (की)
एकत्वात् — एकता होने से
वस्तु — वस्तु (की)

तत्त्वम् — एकता (होती है) ।

संगति — क्या चित्त अपनी वासना के कारण ही दृश्य रूप में प्रतीत होने लग जाता है और चित्त से भिन्न कोई वस्तु नहीं है ?

वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयोर्विभक्तः पन्थाः ॥१५॥

वस्तु — वस्तु (के)
साम्ये — एक होने पर (भी साधारण)
चित्त — चित्तों (के)
भेदात् — भेद से
तयोः — उन दोनों अर्थात् चित्त और उसके द्वारा देखी जाने वाली वस्तु के
विभक्तः — अलग-अलग
पन्थाः — मार्ग (हैं) ।

संगति — जब साधारण चित्त अपनी वासनाओं के अनुसार वस्तुएँ भिन्न भिन्न प्रतीत करता है, तो क्या वस्तु की सत्ता चित्त से स्वतन्त्र है?

न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा किं स्यात् ॥१६॥

च — और (ग्राह्य)
वस्तु — वस्तु (किसी)
एक — एक
चित्त — चित्त (के)
तन्त्रम् — अधीन
न — नहीं (है, क्योंकि)
तत् — वह (वस्तु)

अप्रमाणकम् — बिना प्रमाण के, अर्थात् जब वह चित्त का विषय न रहे,
तदा — उस (समय)
किम् — क्या
स्यात् — होगी ? (अर्थात् चित्त का विषय न रहने पर भी वस्तु की सत्ता रहती है ।)

संगति *— परन्तु वह वस्तु चित्त को सदा के लिए ज्ञात क्यों नहीं होती ?*

तदुपरागापेक्षित्वाच्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम् ॥१७॥
तत् — उस
वस्तु — वस्तु (के विषय का चित्त में)
उपराग — प्रतिबिम्ब (पड़ने की)
चित्तस्य — चित्त (को)
अपेक्षित्वात् — अपेक्षा होती है, (इसलिए चित्त को वह वस्तु कभी)
ज्ञात — ज्ञात (और कभी)
अज्ञातम् — अज्ञात (होती है) ।

संगति *— इस प्रकार दृश्य वस्तुओं से चित्त की सत्ता भिन्न सिद्ध करके अब द्रष्टा अर्थात् आत्मा की चित्त से भिन्न सत्ता सिद्ध करते हैं ।*

सदा ज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्यापरिणामित्वात् ॥१८॥
चित्त — (उस चित्त के स्वामी को अपने) चित्त (की)
वृत्तयः — वृत्तियाँ
सदा — सदा
ज्ञाताः — ज्ञात (रहती हैं, क्योंकि)

तत् — उस (चित्त का)
प्रभोः — स्वामी
पुरुषस्य — पुरुष
अपरिणामित्वात् — अपरिणामी अर्थात् परिवर्तन-रहित (है) ।

संगति *— तो क्या चित्त अपने आप को प्रकाशित नहीं कर सकता ?*

न तत्स्वाभासं दृश्यत्वात् ॥१९॥
तत् — वह (चित्त)
स्व — अपने आप (को)
आभासम् — प्रकाशित
न — नहीं (कर सकता, क्योंकि वह चित्त)
दृश्यत्वात् — दृश्य (मात्र है) ।

संगति *— क्या चित्त अपना और विषय का ज्ञान एक साथ कर सकता है ?*

एकसमये चोभयानवधारणम् ॥२०॥
च — और
एक — एक
समये — समय में
उभय — दोनों अर्थात् चित्त और उस के विषय का
अनवधारणम् — ज्ञान नहीं (हो सकता) ।

संगति *— क्या चित्त अपने आप को ज्ञात नहीं कर सकता ?*

चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धेरतिप्रसङ्गः स्मृतिसंकरश्च ॥२१॥

चित्त — (यदि एक) चित्त (को)
अन्तर — दूसरे (चित्त का)
दृश्ये — दृश्य (माना जाए, तो)
बुद्धिबुद्धेः — चित्त के चित्त का
अतिप्रसङ्गः — अनवस्था दोष (होगा)
च — और
स्मृति — स्मृतियों (में भी)
सङ्करः — मिश्रण अर्थात् दोष (हो जाएगा) ।

***संगति** — तब क्रियारहित और अपरिणामी पुरुष विषय को कैसे ग्रहण कर सकता है, क्योंकि विषय को ग्रहण करने में क्रिया और परिणाम दोनों होते हैं ?*

चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम् ॥२२॥

चितेः — (यद्यपि) चिति अर्थात् चेतन-पुरुष
अ-प्रति-संक्रमायाः — क्रियारहित अर्थात् अपरिणामी (है, तो भी वह)
तत् — उस (स्वप्रतिबिम्बित चित्त के)
आकार — आकार (की)
आपत्तौ — प्राप्ति होने पर
स्व — अपने (विषयभूत)
बुद्धि — चित्त (का)
संवेदनम् — ज्ञान (करता है) ।

***संगति** — चित्त क्यों पुरुष और दृश्य जैसा ज्ञात होता है ?*

द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम् ॥२३॥

द्रष्टृ — द्रष्टा (और)
दृश्य — दृश्य (से)
उपरक्तम् — रंगा हुआ
चित्तम् — चित्त
सर्व — सब
अर्थम् — अर्थों अर्थात् आकार (वाला होता है) ।

***संगति** — परन्तु चित्त की वासनाएँ पुरुष की कैसे हो सकती हैं ?*

तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि परार्थं संहत्यकारित्वात् ॥२४॥

तत् — वह (चित्त)
असंख्येय — अनगिनत
वासनाभिः — वासनाओं से
चित्रम् — चित्रित (हुआ)
अपि — भी
पर — दूसरे (के)
अर्थम् — लिए (है, क्योंकि वह चित्त)
संहत्य-कारित्वात् — संहत्यकारी[२६] (है) ।

***संगति** — अब आत्मा का वास्तविक स्वरूप कैसे जाना जा सकता है?*

---

[२६] **संहत्यकारी** — अनेक तत्वों के संयोग से बना पदार्थ स्वयं के लिए नहीं होता अपितु दूसरों के लिए कार्य में समर्थ होता है ।

विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः ॥२५॥

विशेष — (विवेकख्याति द्वारा पुरुष और चित्त में) भेद (को)
दर्शिनः — प्रत्यक्ष कर लेने वाले (योगी की)
आत्म-भाव — आत्म भाव (की)
भावना — भावना (की)
विनिवृत्तिः — निवृत्ति (हो जाती है) ।

संगति — विशेष-दर्शन के उदय होने पर विशेष-दर्शी का चित्त कैसा होता है ?

तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम् ॥२६॥

तदा — तब (विशेष-दर्शन के उदय होने पर विशेष-दर्शी का)
चित्तम् — चित्त
विवेक — विवेक (की ओर)
निम्नम् — झुका हो कर
कैवल्य — कैवल्य
प्राग्भारम् — अभिमुख (हो जाता है) ।

संगति — विवेक-प्रवाही चित्त में भी बीच बीच में कभी कभी व्युत्थान की वृत्तियाँ क्यों उत्पन्न होती हैं ?

तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्यः ॥२७॥

तत् — उस (विवेकज्ञान के)
छिद्रेषु — छिद्रों अर्थात् अन्तराल में
प्रत्यय-अन्तराणि — दूसरी (व्युत्थान की) वृत्तियाँ (पूर्व के व्युत्थान के)
संस्कारेभ्यः — संस्कारों से (होती हैं) ।

संगति — उन व्युत्थान के संस्कारों के त्याग के क्या उपाय हैं ?

हानमेषां क्लेशवदुक्तम् ॥२८॥

एषाम् — उन (व्युत्थान के संस्कारों की)
हानम् — निवृत्ति (भी)
क्लेशवत् — क्लेशों की भाँति (ही)
उक्तम् — कही (गई है) ।

संगति — विवेकज्ञान प्राप्त होने के बाद क्या होता है ?

प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः ॥२९॥

प्रसंख्याने — (जो योगी) विवेकज्ञान में
अपि — भी
अकुसीदस्य — विरक्त है, (उस को)
सर्वथा — निरन्तर
विवेकख्यातेः — विवेकख्याति के उदय होने से
धर्म-मेघः — धर्ममेघ
समाधिः — समाधि (प्राप्त होती है) ।

संगति — धर्ममेघ समाधि का क्या फल है ?

ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः ॥३०॥

ततः — उस (धर्ममेघ समाधि से)
क्लेश — क्लेश
कर्म — कर्मों (की)
निवृत्तिः — निवृत्ति (होती है) ।

संगति — क्लेश-कर्मों की निवृत्ति से क्या होता है ?

तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम् ॥३१॥

तदा — तब (कर्मों की निवृत्ति होने पर)
सर्व — सब
आवरण — आवरण (और)
मल — मल (से)
अपेतस्य — अलग हुए (चित्त) के
ज्ञानस्य — ज्ञान के
आनन्त्यात् — अनन्त होने से
ज्ञेयम् — जानने योग्य (वस्तु)
अल्पम् — थोड़ी (रह जाती है) ।

संगति — तब पुनर्जन्म देने वाले गुणों के परिणाम का क्या होता है?

ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम् ॥३२॥

ततः — तब
कृतार्थानाम् — कृतार्थ अर्थात् अपने काम को पूरा कर चुके हुए
गुणानाम् — गुणों के
परिणाम — परिणाम (के)
क्रम — क्रम (की)
समाप्तिः — समाप्ति (हो जाती है) ।

संगति — प्रसंगवश क्रम का स्वरूप बतलाते हैं ।

क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः ॥३३॥

क्षण — क्षणों

प्रतियोगी — सम्बन्धी (प्रतिक्षण होने वाली)
परिणाम — परिणाम (के)
अपरान्त — अन्त (में)
निर्ग्राह्यः — ग्रहण करने योग्य (गुणों की अवस्था-विशेष)
क्रमः — क्रम (कहलाती है) ।

संगति — गुणों के परिणाम-क्रम की समाप्ति पर क्या होता है ?

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति ॥३४॥

पुरुष — पुरुष
अर्थ — अर्थ (से)
शून्यानाम् — शून्य हुए
गुणानाम् — गुणों का
प्रतिप्रसवः — अपने कारण में लीन हो जाना
वा — अथवा (अपने)
स्वरूप — स्वरूप (में)
प्रतिष्ठा — अवस्थित (हो जाना)
चितिशक्तिः — चितिशक्ति अर्थात् द्रष्टा (का)
कैवल्यम् — कैवल्य अर्थात् स्वरूपस्थिति है (और यह पाद तथा योगशास्त्र यहाँ)
इति — समाप्त (होता है) ।

-ॐ-

अथ योगानुशासनम् ॥१॥

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥२॥

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥३॥

वृत्तिसारूप्यमितरत्र ॥४॥

वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः ॥५॥

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ॥६॥

प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ॥७॥

विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥८॥

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः ॥९॥

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥१०॥

अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः ॥११॥

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥१२॥

तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः ॥१३॥

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः ॥१४॥

दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम् ॥१५॥

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम् ॥१६॥

वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् सम्प्रज्ञातः ॥१७॥

विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः ॥१८॥

भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम् ॥१९॥

श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् ॥२०॥

तीव्रसंवेगानामासन्नः ॥२१॥

मृदुमध्याधिमात्रत्वात् ततोऽपि विशेषः ॥२२॥

ईश्वरप्रणिधानाद्वा ॥२३॥

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ॥२४॥

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम् ॥२५॥

पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥२६॥

तस्य वाचकः प्रणवः ॥२७॥

तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥२८॥

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ॥२९॥

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥३०॥

दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः ॥३१॥

तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः ॥३२॥

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥३३॥

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य ॥३४॥

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धिनी ॥३५॥

विशोका वा ज्योतिष्मती ॥३६॥

वीतरागविषयं वा चित्तम् ॥३७॥

स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ॥३८॥

यथाभिमतध्यानाद्वा ॥३९॥

परमाणुपरममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः ॥४०॥

क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः ॥४१॥

तत्र शब्दार्थज्ञानविकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः ॥४२॥

स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा निर्वितर्का ॥४३॥

एतयैव सविचारा निर्विचारा च सूक्ष्मविषया व्याख्याता ॥४४॥

सूक्ष्मविषयत्वं चालिङ्गपर्यवसानम् ॥४५॥

ता एव सबीजः समाधिः ॥४६॥

निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः ॥४७॥

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा ॥४८॥

श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया विशेषार्थत्वात् ॥४९॥

तज्जः संस्कारोऽन्यसंस्कारप्रतिबन्धी ॥५०॥

तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः ॥५१॥

तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः ॥१॥

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च ॥२॥

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः ॥३॥

अविद्याक्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम् ॥४॥

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या ॥५॥

दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता ॥६॥

सुखानुशयी रागः ॥७॥

दुःखानुशयी द्वेषः ॥८॥

स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः ॥९॥

ते प्रतिप्रसवहेयाः सूक्ष्माः ॥१०॥

ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः ॥११॥

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः ॥१२॥

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ॥१३॥

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात् ॥१४॥

परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः ॥१५॥

हेयं दुःखमनागतम् ॥१६॥

द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः ॥१७॥

प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम् ॥१८॥

विशेषाविशेषलिङ्गमात्रालिङ्गानि गुणपर्वाणि ॥१९॥

द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः ॥२०॥

तदर्थ एव दृश्यस्यात्मा ॥२१॥

कृतार्थं प्रति नष्टमप्यनष्टं तदन्यसाधारणत्वात् ॥२२॥

स्वस्वामिशक्त्योः स्वरूपोपलब्धिहेतुः संयोगः ॥२३॥

तस्य हेतुरविद्या ॥२४॥

तदभावात् संयोगाभावो हानं तद् दृशेः कैवल्यम् ॥२५॥

विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः ॥२६॥

तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा ॥२७॥

योगाङ्गाऽनुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः ॥२८॥

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि ॥२९॥

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥३०॥

जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम् ॥३१॥

शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥३२॥

वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम् ॥३३॥

वितर्का हिंसादयः कृतकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका मृदुमध्याधिमात्रा दुःखाज्ञानानन्तफला इति प्रतिपक्षभावनम् ॥३४॥

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः ॥३५॥

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् ॥३६॥

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ॥३७॥

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः ॥३८॥

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः ॥३९॥

शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः ॥४०॥

सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च ॥४१॥

संतोषादनुत्तमसुखलाभः ॥४२॥

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः ॥४३॥

स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः ॥४४॥

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात् ॥४५॥

स्थिरसुखमासनम् ॥४६॥

प्रयत्नशैथिल्यानन्त्यसमापत्तिभ्याम् ॥४७॥

ततो द्वन्द्वानभिघातः ॥४८॥

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः ॥४९॥

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः ॥५०॥

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः ॥५१॥

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् ॥५२॥

धारणासु च योग्यता मनसः ॥५३॥

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः ॥५४॥

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् ॥५५॥

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा ॥१॥

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ॥२॥

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः ॥३॥

त्रयमेकत्र संयमः ॥४॥

तज्जयात्प्रज्ञालोकः ॥५॥

तस्य भूमिषु विनियोगः ॥६॥

त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः ॥७॥

तदपि बहिरङ्गं निर्बीजस्य ॥८॥

व्युत्थाननिरोधसंस्कारयोरभिभवप्रादुर्भावौ निरोधक्षणचित्तान्वयो निरोधपरिणामः ॥९॥

तस्य प्रशान्तवाहिता संस्कारात् ॥१०॥

सर्वार्थतैकाग्रतयोः क्षयोदयौ चित्तस्य समाधिपरिणामः ॥११॥

ततः पुनः शान्तोदितौ तुल्यप्रत्ययौ चित्तस्यैकाग्रतापरिणामः ॥१२॥

एतेन भूतेन्द्रियेषु धर्मलक्षणावस्थापरिणामा व्याख्याताः ॥१३॥

शान्तोदिताव्यपदेश्यधर्मानुपाती धर्मी ॥१४॥

क्रमान्यत्वं परिणामान्यत्वे हेतुः ॥१५॥

परिणामत्रयसंयमादतीतानागतज्ञानम् ॥१६॥

शब्दार्थप्रत्ययानामितरेतराध्यासात् संकरस्तत्प्रविभागसंयमात् सर्वभूतरुतज्ञानम् ॥१७॥

संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम् ॥१८॥

प्रत्ययस्य परचित्तज्ञानम् ॥१९॥

न च तत् सालम्बनं तस्याविषयीभूतत्वात् ॥२०॥

कायरूपसंयमात् तद्ग्राह्यशक्तिस्तम्भे चक्षुःप्रकाशा सम्प्रयोगेऽन्तर्धानम् ॥२१॥

सोपक्रमं निरुपक्रमं च कर्म तत्संयमादपरान्तज्ञानमरिष्टेभ्यो वा ॥२२॥

मैत्र्यादिषु बलानि ॥२३॥

बलेषु हस्तिबलादीनि ॥२४॥

प्रवृत्त्यालोकन्यासात् सूक्ष्मव्यवहितविप्रकृष्टज्ञानम् ॥२५॥

भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात् ॥२६॥

चन्द्रे ताराव्यूहज्ञानम् ॥२७॥

ध्रुवे तद्गतिज्ञानम् ॥२८॥

नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम् ॥२९॥

कण्ठकूपे क्षुत्पिपासानिवृत्तिः ॥३०॥

कूर्मनाड्यां स्थैर्यम् ॥३१॥

मूर्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम् ॥३२॥

प्रातिभाद्वा सर्वम् ॥३३॥

हृदये चित्तसंवित् ॥३४॥

सत्त्वपुरुषयोरत्यन्तासंकीर्णयोः प्रत्ययाविशेषो भोगः परार्थान्यस्वार्थसंयमात् पुरुषज्ञानम् ॥३५॥

ततः प्रातिभश्रावणवेदनादर्शास्वादवार्ता जायन्ते ॥३६॥

ते समाधावुपसर्गा व्युत्थाने सिद्धयः ॥३७॥

बन्धकारणशैथिल्यात्प्रचारसंवेदनाच्च चित्तस्य परशरीरावेशः ॥३८॥

उदानजयाज्जलपङ्ककण्टकादिष्वसङ्ग उत्क्रान्तिश्च ॥३९॥

समानजयाज्ज्वलनम् ॥४०॥

श्रोत्राकाशयोः सम्बन्धसंयमाद्दिव्यं श्रोत्रम् ॥४१॥

कायाकाशयोः सम्बन्धसंयमाल्लघुतूलसमापत्तेश्चाकाशगमनम् ॥४२॥

बहिरकल्पिता वृत्तिर्महाविदेहा ततः प्रकाशावरणक्षयः ॥४३॥

स्थूलस्वरूपसूक्ष्मान्वयार्थवत्त्वसंयमाद् भूतजयः ॥४४॥

ततोऽणिमादिप्रादुर्भावः कायसम्पत्तद्धर्मानभिघातश्च ॥४५॥

रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वानि कायसम्पत् ॥४६॥

ग्रहणस्वरूपास्मितान्वयार्थवत्त्वसंयमादिन्द्रियजयः ॥४७॥

ततो मनोजवित्वं विकरणभावः प्रधानजयश्च ॥४८॥

सत्त्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वं च ॥४९॥

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम् ॥५०॥

स्थान्युपनिमन्त्रणे सङ्गस्मयाकरणं पुनरनिष्टप्रसङ्गात् ॥५१॥

क्षणतत्क्रमयोः संयमाद्विवेकजं ज्ञानम् ॥५२॥

जातिलक्षणदेशैरन्यतानवच्छेदात् तुल्ययोस्ततः प्रतिपत्तिः ॥५३॥

तारकं सर्वविषयं सर्वथाविषयमक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम् ॥५४॥

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति ॥५५॥

जन्मौषधिमन्त्रतपःसमाधिजाःसिद्धयः ॥१॥

जात्यन्तरपरिणामः प्रकृत्यापूरात् ॥२॥

निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत् ॥३॥

निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात् ॥४॥

प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तमेकमनेकेषाम् ॥५॥

तत्र ध्यानजमनाशयम् ॥६॥

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम् ॥७॥

ततस्तद्विपाकानुगुणानामेवाभिव्यक्तिर्वासनानाम् ॥८॥

जातिदेशकालव्यवहितानामप्यानन्तर्यं स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात् ॥९॥

तासामनादित्वं चाशिषो नित्यत्वात् ॥१०॥

हेतुफलाश्रयालम्बनैः संगृहीतत्वादेषामभावे तदभावः ॥११॥

अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यध्वभेदाद्धर्माणाम् ॥१२॥

ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः ॥१३॥

परिणामैकत्वाद्वस्तुतत्त्वम् ॥१४॥

वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयोर्विभक्तः पन्थाः ॥१५॥

न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा किं स्यात् ॥१६॥

तदुपरागापेक्षित्वाच्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम् ॥१७॥

सदा ज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्यापरिणामित्वात् ॥१८॥

न तत्स्वाभासं दृश्यत्वात् ॥१९॥

एकसमये चोभयानवधारणम् ॥२०॥

चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धेरतिप्रसङ्गः स्मृतिसंकरश्च ॥२१॥

चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम् ॥२२॥

द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम् ॥२३॥

तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि परार्थं संहत्यकारित्वात् ॥२४॥

विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः ॥२५॥

तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम् ॥२६॥

तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्यः ॥२७॥

हानमेषां क्लेशवदुक्तम् ॥२८॥

प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः ॥२९॥

ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः ॥३०॥

तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम् ॥३१॥

ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम् ॥३२॥

क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः ॥३३॥

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति ॥३४॥

-ॐ-

ॐ तालिका (१)

ॐ तालिका (२)

समाधि तालिका

योग के छब्बीस तत्त्व

ॐ		चेतनतत्त्व जो कूटस्थ नित्य है					
		ब्रह्म जो सृष्टि का निमित्त-कारण है			पुरुष (आत्मा) जो अनन्त और द्रष्टा है		
पाद	मात्रा	ब्रह्म का रूप	सृष्टि का कार्य	ब्रह्म जो उपास्य है	उपास्य का उपासक	चेतना की अवस्था	मुख्य प्रकृति
१	**अकार**	शबल जो **स्थूल** रूप है	**उत्पत्ति** जो ब्रह्मा है	**विराट्** जो चेतनतत्त्व और समष्टि स्थूल जगत् (जड़) का अधिष्ठाता है	**विश्व** जो चेतनतत्त्व का शबल स्वरूप और व्यष्टि स्थूल शरीर (जड़) का अभिमानी जीव है	**जाग्रत** जो कर्ता और भोक्ता है	अग्नि
२	**उकार**	शबल जो **सूक्ष्म** रूप है	**स्थिति** जो विष्णु है	**हिरण्यगर्भ** जो चेतनतत्त्व और समष्टि सूक्ष्म जगत् (जड़) का अधिष्ठाता है	**तैजस** जो चेतनतत्त्व का शबल स्वरूप और व्यष्टि सूक्ष्म शरीर (जड़) का अभिमानी जीव है	**स्वप्न** जो केवल भोक्ता है	वायु
३	**मकार**	शबल जो **कारण** रूप है	**प्रलय** जो महेश है	**ईश्वर** जो चेतनतत्त्व और समष्टि कारण जगत् (जड़) का अधिष्ठाता अर्थात् पुरुष-विशेष है	**प्राज्ञ** जो चेतनतत्त्व का शबल स्वरूप और व्यष्टि कारण शरीर (जड़) का अभिमानी जीव है	**सुषुप्ति** जो अकर्ता और अभोक्ता है	आदित्य (महत्तत्व)
४	**अमात्र विराम**	**निर्गुण** जो अधिष्ठाता है	**शुद्ध-ब्रह्म**	**शुद्ध-ब्रह्म** अथवा परब्रह्म अथवा परमात्मा जो नियन्ता और सर्वज्ञ अर्थात् शुद्ध-चेतनतत्त्व, ज्ञानस्वरूप, सर्वव्यापक, निष्क्रिय, अनादि और अनन्त है	**शुद्ध-आत्मा** जो साक्षी है	**तुरीय**	

ॐ		जड़तत्त्व जो नित्य परिणामी है			बन्ध और मोक्ष
		प्रकृति जो दृश्य अर्थात् नाम और रूप वाली है			
पाद	मात्रा	५ कोश	तत्त्व	प्रधान गुण	
१	अकार	**अन्नमय** — ५ स्थूल भूत अर्थात् स्थूल शरीर और स्थूल इन्द्रियाँ	५ **स्थूल भूत** — आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी ५ **तन्मात्रा** — शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध	**तमस्** जो स्थिति है	वैकृतिक
२	उकार	**प्राणमय** — ५ कर्मेन्द्रियाँ और ५ प्राण **मनोमय** — मन और ५ ज्ञानेन्द्रियाँ **विज्ञानमय** — बुद्धि और अहंकार	५ **कर्मेन्द्रियाँ** — वाणी, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा ५ **प्राण** — प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान (५ उप-प्राण — नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय) ५ **ज्ञानेन्द्रियाँ** — श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना और घ्राण	**रजस्** जो क्रिया है	दाक्षिणिक
३	मकार	**आनन्दमय** — समष्टि-चित्त अर्थात् महत्तत्व		**सत्त्व** जो प्रकाश है	प्राकृतिक (और विदेह)
४	अमात्र विराम			**गुणातीत**	कैवल्य

आलम्बन	समाधि		समाधि का विषय	समाधि का भेद	समाधि की भावना	कोश	समाधि की वृत्ति
सबीज	**सम्प्रज्ञात**	**वितर्क**	पाँच स्थूल्भूत-विषयक तथा स्थूल इन्द्रिय-विषयक	सवितर्क अथवा सविकल्प	शब्द, अर्थ और ज्ञान की भावना सहित	अन्नमय	ग्राह्य
				निर्वितर्क अथवा निर्विकल्प	शब्द, अर्थ और ज्ञान की भावना रहित	प्राणमय	ग्राह्य
		विचार	सूक्ष्मभूत-विषयक तथा सूक्ष्म इन्द्रिय-विषयक	सविचार	देश, काल और धर्म की भावना सहित	मनोमय	ग्राह्य
				निर्विचार	देश, काल और धर्म की भावना रहित		ग्राह्य
		आनन्द	तन्मात्राओं तथा इन्द्रियों के कारण सत्त्व-प्रधान अहंकार-विषयक	निर्विचार की उच्चतर अवस्था		विज्ञानमय	ग्रहण अर्थात् अहंकार में अहम् अस्मि वृत्ति
		अस्मिता	चेतन से प्रतिबिम्बित चित्तसत्त्व बीज रूप अहंकार-विषयक	निर्विचार की उच्चतम अवस्था		आनन्दमय	ग्रहीतृ अर्थात् अस्मिता (बीज रूप समष्टि अहंकार) में अस्मि की वृत्ति
निर्बीज	**असम्प्रज्ञात**						

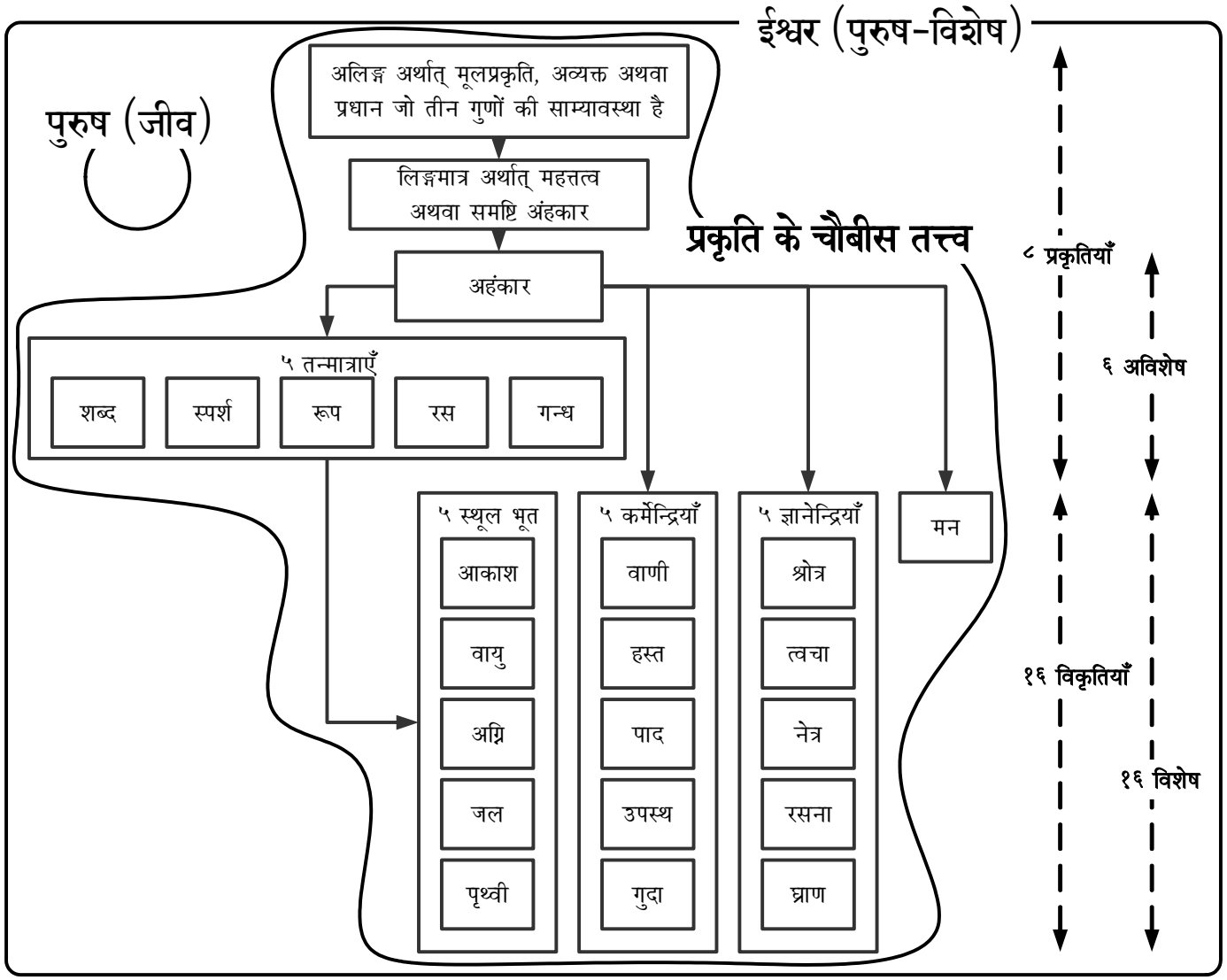
ईश्वर (पुरुष-विशेष)
पुरुष (जीव)
अलिङ्ग अर्थात् मूलप्रकृति, अव्यक्त अथवा प्रधान जो तीन गुणों की साम्यावस्था है
लिङ्गमात्र अर्थात् महत्तत्व अथवा समष्टि अंहकार
अहंकार
प्रकृति के चौबीस तत्त्व
५ तन्मात्राएँ
शब्द
स्पर्श
रूप
रस
गन्ध
५ स्थूल भूत
आकाश
वायु
अग्नि
जल
पृथ्वी
५ कर्मेन्द्रियाँ
वाणी
हस्त
पाद
उपस्थ
गुदा
५ ज्ञानेन्द्रियाँ
श्रोत्र
त्वचा
नेत्र
रसना
घ्राण
मन
८ प्रकृतियाँ
६ अविशेष
१६ विकृतियाँ
१६ विशेष